श्री सुमित्रानन्दन पन्त

मुक्ति यज्ञ

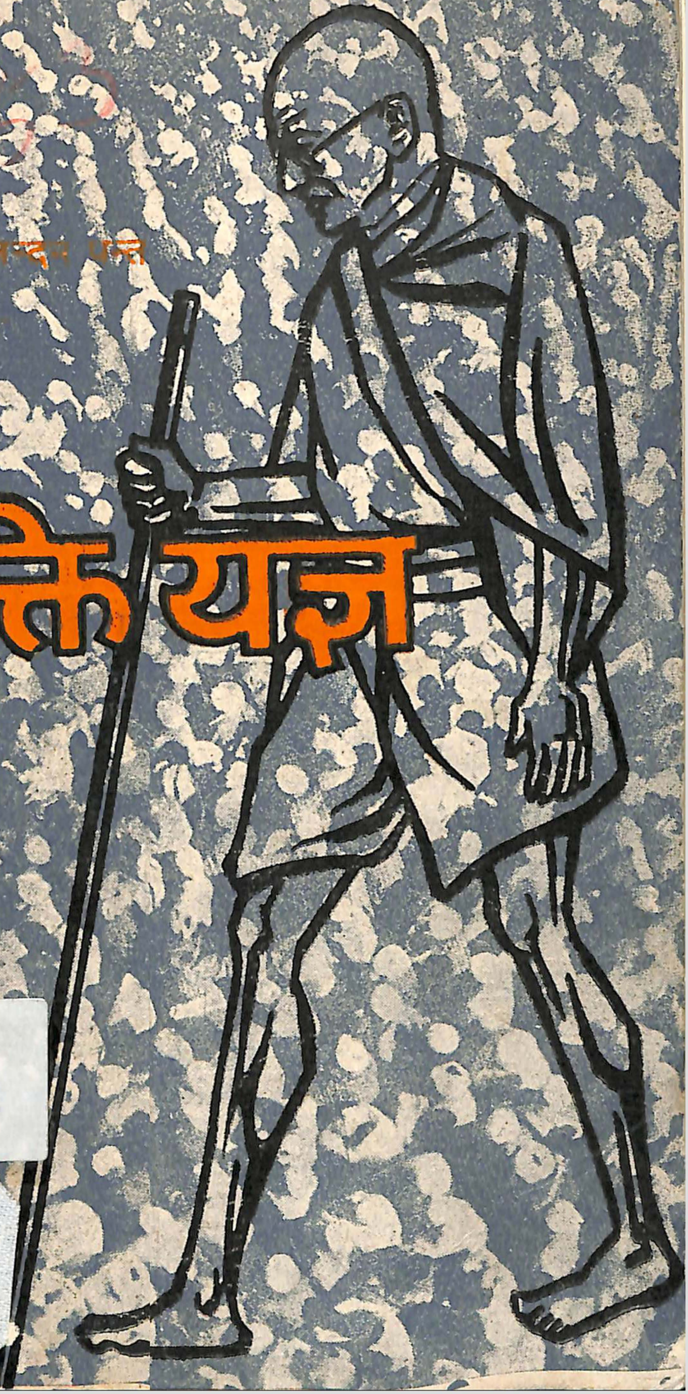

H
811.6
P 195 M

H
811.6
P195M

INDIAN INSTITUTE OF
ADVANCED STUDY
LIBRARY * SIMLA

CATALOGUED

श्री सुमित्रानन्दन पन्त

मुक्ति यज्ञ

गांधीजी के नेतृत्व में लड़े गये भारत के
स्वातन्त्र्य-संग्राम से सम्बद्ध खण्ड काव्य

भूमिका
सावित्री सिनहा
एम० ए०, पी-एच०डी०, डी० लिट्०

राधाकृष्ण प्रकाशन

H
811.6
P 195 M

46395
2.2.79
18-10-81

©
श्री सुमित्रानन्दन पन्त, इलाहाबाद

२ रुपये मात्र

◇

प्रकाशक
ओंप्रकाश, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली

◇

मुद्रक
श्यामसुन्दर गर्ग
हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली-६

Library IIAS, Shimla
H 811.6 P 195 M
00046395

मुक्ति यज्ञ

५–२३ परिचय

२५–७३ मुक्ति-यज्ञ

७५–८६ शब्दार्थ और प्रसंगार्थ

परिचय

कवि-परिचय

श्री सुमित्रानन्दन पंत का जन्म सन् १९०० में कौसानी में हुआ। दस साल की आयु तक उनका नाम गोसाईंदत्त था। महाकवि का जन्म और उनकी माँ की मृत्यु, ये दोनों घटनाएँ साथ-साथ घटित हुईं। मातृविहीन, अत्यधिक दुर्बल बालक के दीर्घ जीवन की मनौती मनाते हुए उनके वात्सल्य-विमूढ़ पिता ने उन्हें एक गोस्वामी को अर्पित कर दिया, जिससे उनका नाम गोसाईंदत्त पड़ा। उनका बचपन कौसानी में बीता। उनकी प्रारंभिक शिक्षा वहीं के वर्नाक्यूलर स्कूल में हुई। दस वर्ष की आयु में वे अल्मोड़ा गये। वहाँ के हाई स्कूल में नाम लिखाने के समय उन्हें अपना नाम बदलने की आवश्यकता प्रतीत हुई। सर्टिफिकेट पर लिखे नाम को तत्काल चाकू से खुरच कर उन्होंने अपनी कल्पना के आदर्श पात्र सुमित्रानन्दन (लक्ष्मण) का नाम लिख दिया। तभी से उनका यही नाम चल रहा है। अल्मोड़ा से पंतजी को उनकी शिक्षा के लिए काशी भेजा गया। वहाँ के जयनारायण हाई स्कूल से उन्होंने स्कूल लीविंग की परीक्षा पास की और उसके बाद उच्चतर शिक्षा के लिए वे इलाहाबाद गये। सन् १९२१ ई० में असहयोग आंदोलन के कारण उन्होंने कॉलेज की पढ़ाई छोड़ दी।

काव्य-चेतना का प्रादुर्भाव और विकास

पंतजी को कवि बनाने का सबसे अधिक श्रेय उनकी जन्मभूमि के उस नैसर्गिक सौन्दर्य को है जिसकी गोद में पलकर वे बड़े हुए हैं। बचपन से ही उनके संस्कार उन्हें कवि-कर्म की ओर प्रेरित कर रहे थे और उस प्रेरणा के विकास के लिए कौसानी के पर्वत-प्रदेश की प्राकृतिक शोभा ने आधारभूमि का निर्माण किया। वहीं की प्रकृति के बीच बड़े होने के

कारण प्रकृति-निरीक्षण और प्रकृति-प्रेम पंतजी के स्वभाव के अभिन्न अंग बन गये हैं। 'मेरा रचनाकाल' और 'मैं और मेरी कला' नामक निबन्धों में उन्होंने अपने कवि-जीवन की प्रारम्भिक अवस्था का वर्णन इस प्रकार किया है—"तब मैं छोटा-सा चंचल भावुक किशोर था, मेरा काव्यकंठ अभी नहीं फूटा था पर प्रकृति मुझ मातृहीन बालक को, कवि-जीवन के लिए मेरे बिना जाने ही जैसे तैयार करने लगी थी। पर्वत प्रदेश के उज्ज्वल चंचल सौन्दर्य ने मेरे जीवन के चारों ओर अपने नीरव सम्मोहन का जाल बुनना शुरू कर दिया था।"

परन्तु, पंतजी जीवन-भर केवल प्रकृति का आंचल पकड़कर उसी से मनुहारें नहीं करते रहे; हिन्दी कविता की विभिन्न प्रवृत्तियों के उत्थान-पतन के साथ वे प्रायः सभी में अपना योग देते रहे। वर्गीकरण की सुविधा के लिए पंत के सम्पूर्ण काव्य का विभाजन रूप-काव्य और विचार-काव्य नाम से किया जा सकता है। प्रथम वर्ग की मुख्य कृतियाँ हैं—'वीणा', 'ग्रन्थि' और 'पल्लव'। इन कृतियों के कवि की दृष्टि मुख्यतः रूपात्मक और कुछ अंशों में भावात्मक सौन्दर्य-तत्त्वों पर केन्द्रित है। 'वीणा' जैसा कि कवि ने स्वयं कहा है उसका दुधमुँहा प्रयास है। इन कविताओं में पंत जी का किशोर मन उड़ने के लिए पंख फड़फड़ा रहा है। शान्तिप्रिय द्विवेदी के शब्दों में " 'वीणा' में पंतजी के 'अविकच शैशव का अबोध जगत् है।" 'वीणा' की अधिकांश कविताएँ भाव-प्रधान हैं। कल्पना की उड़ानें कहां-कहीं बहुत ऊँची हैं। 'ग्रन्थि' वियोग-शृंगार की रचना है जिसमें कथा केवल पृष्ठभूमि मात्र है और नायक के द्वारा प्रथम पुरुष में कही गई है। उसमें शृंगार के प्रमुख संचारी भावों की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है जो ऐन्द्रियता से युक्त होते हुए भी संयत और परिष्कृत हैं। प्रकृति-प्रेम और प्रकृति-सौन्दर्य की अभिव्यंजना 'पल्लव' में अधिक प्रांजल और परिपक्व रूप में हुई है। 'पल्लव' की अनेक छोटी-बड़ी रचनाओं में पंतजी 'निर्द्वन्द्व प्रकृति-पुत्र' हैं, उनकी दृष्टि प्रकृति के अंग-अंग से फूटती हुई शोभा पर टिकी हुई थी। परन्तु 'पल्लव' में संकलित 'परिवर्तन' कविता में उनके हृदय-मन्थन और बौद्धिक संघर्ष का प्रतिबिम्ब भी मिलता है। इस कविता में बीते हुए तथ्यों के प्रति उपेक्षा और आशोन्मुखी परिवर्तन के प्रति आग्रह विद्यमान

है। यह कहना अनुचित न होगा कि रूप से विचार की और उड़ने की प्रक्रिया का आरम्भ इसी 'परिवर्तन' कविता से हुआ है। 'गुंजन' में पंतजी का ध्यान फलों, ओस के बिन्दुओं और निर्झर की कलकल से हटकर मानव की ओर गया है, परन्तु उसकी समस्याओं से उलझने की इच्छा उनमें नहीं जगी है। 'युगान्त' उस सौन्दर्यभोगी कल्पना-पुत्र के अन्तर्द्वन्द्व की कविता है जिसे निरी कल्पना से अब सन्तोष नहीं मिलता, जो जीवन की समस्याओं पर सोचने को तैयार हो रहा है।

पंतजी का विचारक रूप पहले-पहल उनके प्रतीक-रूपक 'ज्योत्स्ना' में दिखाई दिया था। 'गुंजन' की प्रारम्भिक कविताओं में भी कुछ विचार हैं परन्तु वहाँ कवि का ध्यान मुख्य रूप से कविता के रूप-पक्ष पर ही केंद्रित है। पंतजी ने पृथ्वी के त्रास की आवाज पहली बार 'युगान्त' में सुनी और उसके बाद 'युगवाणी' में इन समस्याओं के निदान और समाधान का कार्य आरम्भ हुआ। पंतजी के विचार-विकास में दो मुख्य दर्शनों की प्रधानता है। वे दर्शन हैं मार्क्सवाद और अरविन्द दर्शन। 'युगवाणी' लिखने के समय तक पंतजी अरविन्द दर्शन के सम्पर्क में नहीं आए थे, इसलिए उनका चिंतन प्राचीन भारतीय दर्शन तथा मार्क्सवाद की पृष्ठभूमि में पल्लवित हुआ। 'युगवाणी' और 'ग्राम्या' में पूंजीपतियों की भर्त्सना तथा कृषक और श्रम-जीवियों आदि की प्रशंसा की गई थी। उसमें मार्क्स का स्वतन्त्र और भौतिकवादी दर्शन का आंशिक स्वीकार्य भी था। यही कारण था कि आलोचकों की ओर से घोषणा कर दी गई कि पंतजी पूर्ण मार्क्सवादी हो गये हैं, लेकिन यदि हम ध्यान से देखें तो पता लग जाता है कि 'युगवाणी' में भी कवि की दृष्टि केवल भौतिकवाद को स्वीकार करके नहीं चली थी। उन्होंने 'युगवाणी' में ही यह समझ लिया था कि भौतिकवाद और अध्यात्म-वाद एक-दूसरे के बिना अधूरे हैं। मनुष्य का कल्याण इसी में है कि वह दोनों के बीच समन्वय स्थापित करे। केवल बहिर्जीवन के संगठन से मनुष्य का कल्याण नहीं हो सकता। संकीर्ण भौतिकवाद पर उन्होंने 'युगवाणी' की अनेक रचनाओं में आक्षेप किया है—

हाड़ मांस का आज बनाओगे तुम मनुज-समाज ?
हाथ पाँव संगठित चलावेंगे जग-जीवन-काज ?

उनकी दृष्टि में भौतिकवाद आध्यात्मिक सिद्धि की प्राप्ति का साधन मात्र है—

भूतवाद उस धरा-स्वर्ग के लिए मात्र सोपान,
जहाँ आत्मदर्शन अनादि से समासीन अम्लान।

'ग्राम्या' की रचना के बाद पंतजी का झुकाव अरविन्द दर्शन की ओर हुआ। 'युगवाणी' और 'ग्राम्या' की रचनाओं में अध्यात्मवाद की सूक्ष्म-रेखाएँ भौतिकवाद की व्यापक पृष्ठभूमि पर खींची गई थीं; अरविन्द दर्शन में उन्हें दोनों के संतुलित समन्वय का संकेत मिला और उसके प्रभाव के कारण पंतजी ने जो काव्य-कृतियाँ लिखीं उनसे उनकी काव्य-चेतना का एक नया मोड़ आरम्भ होता है। यहाँ से 'स्वर्णकिरण' युग का आरम्भ होता है। इसे पंतजी ने 'चेतना काव्य' का नाम दिया है। 'स्वर्णकिरण', 'स्वर्णधूलि', 'उत्तरा', 'अतिमा', 'वाणी' आदि इसी युग की कृतियाँ हैं। पंतजी ने लिखा है कि "मैंने इस नवीन काव्य-संचरण में आदर्शवाद तथा वस्तुवाद के विरोधों को नवीन मानव-चेतना के समन्वय में ढालने का प्रयत्न किया है।"

चेतना काव्य की सबसे महत्त्वपूर्ण और अंतिम कड़ी है 'लोकायतन'। प्रस्तुत 'मुक्ति यज्ञ' प्रसंग 'लोकायतन' का ही एक अंश है, परन्तु अंश होते हुए भी वह अपने-आपमें पूर्ण है। 'लोकायतन' एक लक्ष्यप्रधान भविष्योन्मुखी काव्य है। उसका कवि "वाल्मीकि अथवा व्यास की तरह एक ऐसे युगशिखर पर खड़ा है जिसके निचले स्तरों में उद्वेलित मन का गर्जन टकरा रहा है और ऊपर स्वर्ग का प्रकाश, अमरों का संगीत और भावी का सौंदर्य बरस रहा है।" उनके अपने शब्दों में—"सांप्रतिक युग का मुख्य प्रश्न सामूहिक आत्मा का मनःसंगठन है, अतः आधुनिक मानव को अन्तःशुद्धि के द्वारा अन्तर्जगत के नये संस्कारों को गढ़ना है। सामाजिक स्तर पर आत्मा का यही संस्कार 'लोकायतन' का प्रतिपाद्य है।" वास्तव में पंतजी ने आज की दुर्निवार स्थितियों में जबकि चारों ओर मूल्यों के विघटन, खंडित आस्था और आपाधापी की हलचल का बोलबाला है, 'लोकायतन' में आत्मा का एक अमर भवन स्थापित करने तथा सारी पृथ्वी को अन्तश्चैतन्य के रागात्मक वृत्त में बाँधने की कल्पना की है। पंतजी की यह विश्व-दृष्टि राष्ट्र

और देश की सीमाओं को पार करती हुई गई है, इसलिए भारत के राजनीतिक आंदोलनों और सामाजिक समस्याओं का चित्रण भी उनके लिए अनिवार्य हो गया है। 'मुक्ति यज्ञ' 'लोकायतन' का वही अंश है जिसमें भारत के स्वतन्त्रता युद्ध का आद्योपान्त वर्णन किया गया है। इसलिए 'मुक्ति यज्ञ' को समझने के लिए उस युग की राजनीतिक-सामाजिक पृष्ठभूमि को समझ लेना आवश्यक है।

'मुक्ति यज्ञ' की पृष्ठभूमि

'मुक्ति यज्ञ' में उस युग का इतिहास अंकित है जब भारत में एक हलचल मची हुई थी और सम्पूर्ण देश में क्रांति की आग सुलग रही थी; प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद ब्रिटिश सरकार के दमनचक्र के आतंक के अवसाद पर विजय पाकर जनता फिर नये युद्ध के लिए तैयार हो गई थी। देश के युवक विशेष रूप से जागरूक हो गये थे। सारे देश में युवक समाजों की नींव पड़ी जिनमें देश के राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक प्रश्नों पर विचार होता था। इन्हीं के द्वारा जनता को सुभाषचन्द्र बोस और जवाहरलाल नेहरू जैसे सेनानी मिले; सारे देश में सत्याग्रह, हड़ताल और बहिष्कार आंदोलनों की बाढ़ आ गई। किसानों और मज़दूरों के जीवन में जागृति की एक नई लहर आ गई। सरदार पटेल के लौह नेतृत्व में बारदोली के किसानों ने भूमिकर से छूट पाने के लिए सरकार के विरुद्ध सत्याग्रह किया। इस निःशस्त्र युद्ध की असाधारण विजय के विषय में भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद ने अपनी आत्मकथा में लिखा था कि "बारदोली-विजय ने यह सिद्ध कर दिया कि भारत की जनता को निःशस्त्र करके महात्मा गांधी ने अंग्रेज सरकार को निःशस्त्र कर दिया है।"

साइमन कमीशन का बहिष्कार

सन् १९१९ के ऐक्ट में एक आयोग की नियुक्ति की व्यवस्था थी, जिसे दस साल के बाद अपनी रिपोर्ट देनी थी। लेकिन बाल्डविन की प्रतिक्रियावादी सरकार ने बिना कारण बताये उसकी नियुक्ति एक साल के लिए स्थगित कर दी। इस सम्मेलन में किसी भारतीय को नहीं सम्मिलित किया गया,

और अंग्रेजी शासक एक विजेता के समान विजित देश भारत पर अपनी निरंकुश नीति को आरोपित करते रहे। इन्हीं कारणों से क्षुब्ध होकर कांग्रेस में साइमन कमीशन का विरोध का प्रस्ताव पास हुआ। ३ फरवरी, सन् १६२८ को साइमन आयोग का स्वागत हड़तालों, काले झण्डों और 'लौट जाओ' के नारों से किया गया। पं० जवाहरलाल नेहरू ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि "साइमन आयोग के सदस्य नई दिल्ली के वेस्टर्न होटल में ठहरे थे। रात के समय, आस-पास के खंडहरों में गीदड़ों की बोली सुनकर वे समझे कि रात को भी भारतीय जनता उनके पीछे लगी हुई है।" देश-भर के नगरों में जनता और पुलिस की टक्कर हुई। अनेक स्थानों पर निहत्थी जनता पर लाठियाँ बरसाई गईं। लाहौर में स्थिति चरम सीमा पर पहुँच गई, जहाँ लाला लाजपतराय के नेतृत्व में सहस्त्रों की संख्या में जनता, आयोग के विरुद्ध शान्त प्रदर्शन कर रही थी। लाला जी पर एक अंग्रेज़ पुलिस अफसर ने प्रहार किया। हृदय-रोग से पीड़ित होने के कारण वे इस चोट को झेल न सके और लाहौर की जनता अपने प्यारे नेता के अपमान का बदला लेने के लिए पागल हो उठी।

पूर्ण स्वतन्त्रता की माँग

सन् १६२६ में भारत की आंतरिक स्थिति बहुत गम्भीर और विद्रोह-पूर्ण हो गई। विद्यार्थी, मजदूर और किसान सब आक्रोश में भरे हुए थे। लाहौर कांग्रेस का अधिवेशन बड़े उत्तेजनापूर्ण वातावरण में हुआ। जवाहर-लाल नेहरू ने अपने अध्यक्षीय भाषण में साम्राज्यवादी व्यवस्था पर कड़ी चोट की और महात्मा गांधी की अहिंसा नीति का प्रतिपादन किया। अब तक उनका विश्वास बन गया था कि अंग्रेज़ों की दमन नीति और शक्ति-शाली सेना से लोहा लेने योग्य सैन्य-संगठन पराधीन भारत में असम्भव था। उन्होंने कहा कि भारत की स्वतन्त्रता का संघर्ष ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध एक खुला षड्यन्त्र है। २६ जनवरी, सन् १६३० को घोषित किया गया कि कांग्रेस का लक्ष्य पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति है। इसी अधिवेशन में निरंकुश ब्रिटिश सत्ता पर भारत के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राज-नीतिक और आध्यात्मिक जीवन के पतन और ध्वंस का आरोप लगाया

गया और उसके पंजों से मुक्त होने की प्रतीज्ञा दुहराई गई। सम्पूर्ण देश में उत्तेजना और उत्साह की लहर फैल गई। १७२ सदस्यों ने व्यवस्थापिका सभाओं की सदस्यता से त्यागपत्र दिया। इस घोषणा के साथ ही सरकार का दमनचक्र भी तेज़ी से चलने लगा। श्री सुभाषचन्द्र बोस और उनके साथियों को श्रमपूर्ण कारावास का दण्ड दिया गया।

नमक आन्दोलन

साबरमती आश्रम से लगभग २०० मील पर स्थित दण्डी ग्राम में महात्मा गांधी ने नमक सत्याग्रह करने का निश्चय किया। सरदार वल्लभ-भाई पटेल जब गांधीजी की यात्रा से पूर्व ही वहाँ जा रहे थे, उन्हें बन्दी बना लिया गया जिससे गुजरात में विद्रोह की आग लग गई। लगभग ७५,००० किसानों ने साबरमती पर एकत्रित होकर भारत की आज़ादी के लिए मर-मिटने की प्रतीज्ञा दुहराई। १२ मार्च, सन् १६३० को महात्मा गांधी ने अपनी यात्रा आरम्भ की। १६ अप्रैल को जलियाँवाला बाग के शहीदों के स्मृति-दिवस पर उन्होंने नमक-क़ानून तोड़ा। एक ब्रिटिश समाजवादी श्री एच० एन० ब्रेक्सफर्ड उन दिनों भारत में ही थे। उन्होंने कहा कि नमक-क़ानून का भंग भारत में राजनीतिक क्रांति का प्रथम सोपान है। कुछ ऐसे लोग भी थे जो पतीले में समुद्र का पानी उबालकर ब्रिटिश सरकार को मिटाने की कल्पना का उपहास करते थे; पर इतिहास साक्षी है कि श्री ब्रेक्सफर्ड का मत ही ठीक था। दण्डी ग्राम की यात्रा के पहले महात्मा गांधी ने राष्ट्र को आज़ादी के लिए मर-मिटने का सन्देश दिया। भारतीय जनता ने उनका आदेश स्वीकार करके नमक-क़ानून तोड़ा, विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार के लिए सत्याग्रह किया, धरना दिया। १४ अप्रैल को जवाहरलाल नेहरू की गिरफ्तारी के बाद आंदोलन ने और भी ज़ोर पकड़ा। बम्बई नगर में गधों को विदेशी वस्त्रों से सजाकर सड़कों पर घुमाया गया। उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रदेश में खुदाई खिदमतगारों ने बड़ा भारी जुलूस निकाला, वहाँ के आंदोलन ने इतना गम्भीर रूप धारण किया कि उसको वश में लाने के लिए भारी शस्त्रों का प्रयोग किया गया। अठारहवीं गढ़वाल राइफ़िल के सैनिकों ने पठान विद्रोहियों पर हथियार चलाने से इन्कार कर दिया।

गांधीजी की गिरफ्तारी के बाद तो अनेक नगरों में मार्शल ला लगाने की नौबत आ गई। उत्तेजना को दवाने के लिए सैनिकों, हवाई जहाज़ों और सशस्त्र गाड़ियों का उपयोग किया गया। लोहे से मढ़ी हुई लाठियाँ जनता पर निर्दयता से बरसाई गईं। भूमि लाशों और घायलों से पट गई। निःशस्त्र सत्याग्रहियों के ध्वंस और संहार से जनता की आग ठंडी होने के वदले और भी भड़क उठी। छात्र, मजदूर, किसान, वकील, व्यापारी सब महात्मा गांधी की आज्ञा का पालन करने के लिए निकल पड़े। व्यापारी वर्ग ने इस आंदोलन को चलाने के लिए दिल खोलकर आर्थिक सहायता दी जिससे स्वयं-सेवकों का व्यय उठाने की व्यवस्था हो सकी। जनता के इतने अधिक सह-योग की कल्पना सरकार ने नहीं की थी। उसे यह विश्वास नहीं था कि यह अहिंसात्मक विद्रोह इतना व्यापक रूप धारण कर लेगा। इस आंदोलन के अनेक शुभ परिणाम हुए। सूती वस्त्रों का आयात बहुत कम हो गया। सोलह ब्रिटिश कारखाने बन्द हो गए। भारतीय मिलों में दुगुना कार्य होने लगा। लंकाशायर का व्यापार बिलकुल मन्द पड़ गया। इन सब घटनाओं के साथ ही ब्रिटिश सरकार का दमनचक्र भी और तेज़ी से चलने लगा। इसी बीच कांग्रेस को अवैधानिक घोषित कर दिया गया। दीर्घकालीन कारावास और सम्पत्ति की जब्ती आये दिन की घटना बन गई लेकिन भारत की जनता का निश्चय दृढ़ बना रहा।

आतंकवादी आंदोलन

कांग्रेस आंदोलन के साथ ही अन्य राजनीतिक दल भी सक्रिय रूप से राष्ट्र की लड़ाई में भाग लेते रहे। अप्रैल, सन् १९३० में चटगाँव का शस्त्रागार लूट लिया गया। शस्त्र लूटकर क्रान्तिकारी पास की पहाड़ियों में छिप गए और लुक-छिपकर हत्याओं और लूट का अपना कार्यक्रम सक्रिय रूप से चलाते रहे। काफी संख्या में उन्हें शस्त्र समर्पित करने पड़े लेकिन उनमें से बहुत-से वचकर निकल गये जिन्होंने आगे चलकर क्रान्तिवादी नीति से सरकार को दहला दिया। ऐसा कहा जाता है कि सन् १९३० के अंतिम दिनों में तो यह हालत थी कि कोई सप्ताह बिना बम-प्रहार और हत्या के नहीं जाता था। बंगाल इस प्रकार के आतंकवादी

कार्यों का मुख्य केन्द्र था।

विद्रोह और कुण्ठा

उच्च मध्यवर्ग और पूंजीपति वर्ग इस संघर्ष का अन्त चाहता था। उनकी ओर से सुझाव दिया गया कि समझौते की नीति पर चलकर गोल-मेज़ सभा में भाग लिया जाय, परन्तु कांग्रेस और सरकार में समझौता नहीं हो सका। २५ जनवरी, सन् १९३० को गांधीजी बिना किसी शर्त के रिहा कर दिये गये। सुधारवादी नेताओं के प्रभाव और दबाव से महात्मा गांधी समझौते के लिये तैयार हो गये। परन्तु जवाहरलाल नेहरू और सुभाषचन्द्र बोस इस बार भी समझौते के विरुद्ध रहे। दोनों ओर से कुछ शर्तों की स्वीकृति के साथ ५ मार्च, सन् १९३१ को गांधी-इर्विन समझौता हुआ। देश के उग्र नेता और नवयुवक इस समझौते के विरुद्ध थे। उग्र पक्ष के नेताओं ने इस समझौते को भारतीय राष्ट्रीयता की पराजय और अंग्रेज़ी सरकार की विजय माना। इस प्रकार कांग्रेस का कराची अधिवेशन बड़े बोझिल वातावरण में आरम्भ हुआ। गांधीजी, भगतसिंह और उनके साथियों को क्षमा दिलाने में असफल रहे। उनकी फाँसी के कारण सारे देश में क्रोध और क्षोभ छाया हुआ था। इन्हीं दिनों कानपुर के साम्प्रदायिक दंगों में गणेशशंकर विद्यार्थी भी मारे गये। कराची में, रक्त के प्रतीक लाल वस्त्र पहने हुए नवयुवक समाज के सदस्यों ने गांधीजी का स्वागत काले झण्डों और मुर्दाबाद के नारों से किया; परन्तु गांधीजी ने बड़े विवेक और धैर्य के साथ कांग्रेस के प्रतिनिधियों और जनता की उत्तेजना को शान्त किया।

लार्ड विलिंगटन के वाइसराय होने पर ब्रिटिश सरकार की दमन-नीति ने बड़ा भयंकर रूप धारण कर लिया। गांधी-इर्विन समझौते की शर्तें भंग की जाने लगीं। सरकार की तलवार हर समय जनता के सिर पर लटकने लगी थी।

सरकार कांग्रेस की माँगों को जिस प्रकार अनसुना कर रही थी उससे यही निष्कर्ष निकाला गया कि दूसरी गोलमेज सभा में कांग्रेस का भाग लेना राष्ट्र के हित में नहीं होगा। परन्तु वाइसराय ने जनता के प्रति किये जाने

वाले अत्याचारों और अनाचारों को बन्द करने का वचन दिया। २६ अगस्त, सन् १६३१ को गांधीजी ने इंग्लैंड के लिये प्रस्थान किया।

दूसरी गोलमेज सभा का भी कोई अच्छा परिणाम नहीं निकला। गांधीजी भारत और इंग्लैंड के बीच किस सम्मानपूर्ण समानाधिकार के आधार पर बात करने गये थे उसे ब्रिटिश सरकार ने नहीं स्वीकार किया। ब्रिटेन द्वारा प्रस्तावित सुधारों और परिवर्तनों को उन्होंने निस्सार और खोखला बताकर छोड़ दिया। उनके भारत लौटने के पहले ही देश-विदेश में यह खबर फैल गई कि गांधीजी अब फिर सत्याग्रह आरम्भ करेंगे। इटली और रोम होते हुए वे २८ दिसम्बर को भारत पहुँचे और ४ जनवरी, १६३२ को उन्हें पूना जेल में डाल दिया गया।

जितने दिन महात्मा गांधी इंग्लैंड में रहे, भारत में स्वतन्त्रता-आन्दोलन और संघर्ष के दमन का हर सम्भव प्रयत्न किया गया। उत्तर-प्रदेश में स्वतन्त्रता-आन्दोलन और सीमान्त प्रदेश में खुदाई खिदमतगार पहले से भी अधिक ज़ोर पकड़ रहे थे। बंगाल के हिजली कैम्प में गोली चलाई गई जिसमें दो नज़रबन्द मारे गये और बीस घायल हुए। गांधीजी के भारत पहुँचने के पहले ही खान भाइयों तथा पं० जवाहरलाल नेहरू को कैद कर लिया गया। एक ओर सत्याग्रह अपनी दूनी शक्ति के साथ आरम्भ हो गया, और दूसरी ओर सरकार का दमन-चक्र भी दुगुने वेग से चलने लगा। राष्ट्र के एक-एक अंग में विद्रोह उबल रहा था, जिसका उत्तर सरकार गोलियों और मशीनगनों से दे रही थी। राष्ट्रीय पाठशालाओं, किसान सभाओं, नवयुवक सभाओं, छात्र सभाओं इत्यादि पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया गया। उनकी सम्पत्ति जब्त कर ली गई और साधारण जनता को त्रस्त करने के लिये फौज और पुलिस तैनात कर दी गई। राजनीतिक बन्दियों को बिना मुक़दमे और फ़ैसले के अण्डमन भेज दिया जाने लगा।

मैकडानल्ड अवार्ड

इसके बाद ही मैकडानल्ड अवार्ड के द्वारा केन्द्रीय तथा प्रान्तीय धारा-सभाओं में साम्प्रदायिक आधार पर प्रतिनिधियों की संख्या का निर्धारण

किया गया। मुसलमानों को विशेष अधिकार दिये गये, और अल्पसंख्यक जातियों के लिए पृथक् निर्वाचन की व्यवस्था हुई। इस व्यवस्था ने सम्पूर्ण भारतवर्ष को विभिन्न साम्प्रदायिक टुकड़ों में बाँट दिया जिससे भारत की बहुसंख्यक जनता में बहुत असन्तोष फैला। पंजाब और बंगाल में हिन्दुओं का प्रतिनिधित्व उनकी जनसंख्या के अनुपात के अनुसार नहीं था। बंगाल और असम में हिन्दुओं के मूल्य पर यूरोपियनों को अधिक प्रतिनिधित्व मिला। अछूत जातियों को हिन्दुओं से अलग करने के सिद्धान्त से महात्मा गांधी को बहुत धक्का लगा, और २० सितम्बर को उन्होंने आमरण अनशन का व्रत लिया। महात्मा गांधी की प्राणरक्षा के प्रयास में महामना मदनमोहन मालवीय ने पूना में हिन्दू नेताओं की सभा बुलाई। इस सभा के निर्णयों को अंग्रेज सरकार के स्वीकार करने पर महात्मा गांधी ने अपना अनशन तोड़ दिया। उसके बाद राजनीतिक संघर्ष से हटकर उनका ध्यान इस सामाजिक वैषम्य पर केन्द्रित हो गया, और अखिल भारतीय अस्पृश्यता सभा तथा हरिजनोद्धार सभाओं का संगठन किया गया। आन्दोलन का गर्मी धीरे-धीरे कम होने लगी और ८ मई, १९३३ को गांधीजी की मुक्ति के बाद आन्दोलन समाप्त कर दिया गया।

कांग्रेस मन्त्रिमण्डलों की स्थापना

इसके पहले ही मार्च, सन् १९३३ में ब्रिटिश सरकार ने एक 'श्वेतपत्र' निकाला था जिसमें भावी भारत के लिए आयोजित सुधारों का विवरण दिया गया था। दक्षिणपंथी कांग्रेसी शासन में भाग लेने के पक्ष में थे परन्तु पं० नेहरू और सुभाषचन्द्र बोस के नेतृत्व में उग्र दल ने इसका घोर विरोध किया। सन् १९३५ में पं० नेहरू को उनकी पत्नी के चिन्ताजनक स्वास्थ्य के कारण छोड़ दिया गया। जर्मनी जाने के पहले उन्होंने राष्ट्र को रचनात्मक कार्यों द्वारा दृढ़ बनने का सन्देश दिया। पत्नी की मृत्यु के बाद जब वे उनकी अस्थियाँ लेकर भारत लौटे तो सन् १९३६ में कांग्रेस के अध्यक्ष पद से भाषण देते हुए उन लोगों को उन्होंने चेतावनी दी जो सरकारी पदों पर अपनी आँख लगाये बैठे थे। श्री जयप्रकाश नारायण और आचार्य नरेन्द्रदेव के नेतृत्व में समाजवादी विचारधारा के सदस्यों ने अनेक बार विरोध-प्रदर्शन

के लिए अधिवेशन की कार्यवाहियों का बहिष्कार किया। उन्होंने कांग्रेस से त्यागपत्र दे दिया। परन्तु सरदार वल्लभभाई पटेल, राजगोपालाचार्य, भूलाभाई देसाई इत्यादि वरिष्ठ और वयस्क नेताओं की वाणी के सामने इन युवा सदस्यों की नहीं चली और कांग्रेस ने विभिन्न प्रान्तों में मन्त्रि-मण्डल बनाना स्वीकार कर लिया।

कांग्रेस मन्त्रिमण्डलों की स्थापना के बाद, कुछ दिनों के लिए भारत ने स्वतन्त्रता से साँस ली, लेकिन जल्दी ही इसके विरुद्ध अनेक प्रतिक्रियाएँ आरम्भ हो गईं। एक ओर प्रान्तीय मन्त्रिमण्डलों को कदम-कदम पर सरकार द्वारा लगाये गये व्यवधानों का सामना करना पड़ता था, दूसरी ओर मुस्लिम लीग और भारतीय नरेशों की संकीर्ण और स्वार्थी-नीति के कारण नित्य नई समस्याएँ खड़ी रहती थीं। कांग्रेस में आन्तरिक संघर्ष भी इस समय काफी प्रबल हो उठे थे। इस प्रकार एक संयुक्त मोर्चे के अभाव में भारत की शक्ति अपेक्षाकृत बहुत कम हो गई थी।

द्वितीय विश्वयुद्ध

उन्हीं दिनों दूसरा विश्वयुद्ध छिड़ गया। उसमें सहयोग के लिए कांग्रेस ने जो शर्तें ब्रिटिश सरकार के सामने रखीं उन्हें स्वीकार नहीं किया गया। इस कारण कांग्रेस की प्रतिष्ठा पर काफी आँच आई और जनता में अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिए ११ अक्तूबर, १९४० को व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आन्दोलन का आरम्भ गांधीजी द्वारा मनोनीत आचार्य विनोवा भावे ने किया। इसी सम्बन्ध में पं० जवाहरलाल नेहरू को चार साल का सश्रम कारावास दण्ड मिला। सरकार के इस कार्य से सारे देश में क्रोध और उत्तेजना की लहर फैल गई।

इन्हीं दिनों विश्वयुद्ध में इंग्लैंड को कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। रूस पर जर्मनी के आक्रमण से मध्यपूर्व एशिया खतरे में पड़ गया। अपने घर में नजरबन्द श्री सुभाषचन्द्र बोस अंग्रेज़ों को चकमा देकर भाग निकले। जापान के विश्वयुद्ध में सम्मिलित हो जाने पर खतरा भारत के दरवाजे पर ही आ गया; भारतीय महासागर में जापान की जलशक्ति का आतंक छा गया; बंगाल और मद्रास पर युद्ध के बादल मँडराने लगे।

इन परिस्थितियों से बाध्य होकर ब्रिटेन के युद्धकालीन मन्त्रिमण्डल ने भारत की समस्याओं पर विचार करने के लिए 'क्रिप्स मिशन' भेजा और उसके असफल होने के बाद ही 'भारत छोड़ो' आन्दोलन आरम्भ हुआ जिसमें 'करो या मरो' का आदर्श सामने रखा गया।

सन्'४२ का विद्रोह

८ अगस्त, १९४२ को कांग्रेस का बम्बई अधिवेशन समाप्त हुआ और ९ अगस्त को प्रातःकाल वहाँ एकत्रित सब नेताओं को गिरफ्तार करके अज्ञात स्थानों पर भेज दिया गया। सरकारी प्रतिबन्धों के कारण कांग्रेस द्वारा निर्धारित निर्णय भी जनता को ठीक तरह से नहीं ज्ञात हो पाए। वह क्रोध और उत्तेजना से पागल हो उठी और सरकार ने विकराल दानव का रूप धारण कर उसे दमन की भट्ठी में भून डालने का निर्णय कर लिया। एक ओर रेलवे स्टेशन, डाक, तार और टेलीफ़ोन के खम्भे गिराये जाने लगे और दूसरी ओर नरमुण्डों और लाशों से सड़कें पाट दी गई। बिहार और उत्तर प्रदेश में यह ज्वाला बड़े ही भयंकर रूप में फैली। बलिया शहर पर बम-वर्षा की नौबत आ गई। इस आन्दोलन का दमन करने में लगभग तीन महीने लग गये। सतारा और मिदनापुर में विद्रोही जनता ने स्वतन्त्र राष्ट्रीय सरकार बना ली। समाजवादी दल गुप्त रूप से सशस्त्र संघर्ष का संचालन करता रहा। सरकार का रुख भी बड़ा कठोर रहा। सुरक्षा के पहरेदार, सैनिक और पुलिस लुटेरे हिंस्र बन गये। बूढ़े, बच्चों और स्त्रियों के साथ अमानुषिक अत्याचार किये गये। सरकार की बेईमानी और व्यापारी पूँजीपतियों के भ्रष्टाचार के कारण बंगाल में भारी अकाल पड़ा, जिसमें पन्द्रह-बीस लाख मनुष्यों की मृत्यु हुई। नफ़ाखोरों ने लगभग १५० करोड़ का मुनाफ़ा कमाया।

आज़ाद हिन्द सेना

इस काल की एक और बहुत महत्त्वपूर्ण घटना थी श्री सुभाषचन्द्र बोस द्वारा आज़ाद हिन्द सेना का निर्माण। दिसम्बर, १९४१ में जापान ने युद्ध में प्रवेश किया। उस समय मलाया में नियुक्त अमेरिकी, आस्ट्रेलियन और

अंग्रेज़ी सैन्य विभागों के साथ लगभग ६० हज़ार भारतीय सैनिक और उच्च पदाधिकारी भी थे। पराधीन देश के होने के कारण उनके तथा अन्य देश के सैनिकों में वेतन और अन्य सुविधाओं की दृष्टि से बहुत भेदभाव रखा गया था। जापानियों ने बड़ी आसानी से मलाया पर अधिकार कर लिया। इन्हीं दिनों बंगाल के क्रान्तिकारी नेता श्री रासबिहारी बोस ने जापानी सैन्याधिकारियों से मिलकर युद्ध में बन्दी भारतीय सिपाहियों की एक देश-भक्त सेना बनाई। इस प्रकार सितम्बर, सन् १९४२ में भारतीय सेना-नायकों के नेतृत्व में 'आज़ाद हिन्द सेना' बनी। मलाया, बर्मा, हांगकांग, जावा इत्यादि देशों के अनेक प्रवासी भारतीय उसमें सम्मिलित हुए। सुभाषचन्द्र बोस जो जनवरी, १९४१ में अंग्रेज़ों की नज़रबन्दी से निकल भागे थे, अफ़गानिस्तान और जर्मनी होते हुए जापान आ गये थे। उनके नेतृत्व में आज़ाद हिन्द सेना एक महत्त्वपूर्ण और बलशाली सैन्य-संगठन बन गई। २६ जून, सन् १९४५ को भारत के प्रति रेडियो सन्देश भेजते हुए आजाद हिन्द रेडियो से उन्होंने घोषित किया कि आज़ाद हिन्द सेना कोई पराधीन और शक्तिहीन सेना नहीं थी। उसके नायक धुरी राष्ट्रों की सहायता से भारत को अंग्रेज़ों की दासता से मुक्त करने की योजना बना रहे थे।

सन् १९४३ से लेकर १९४५ तक भारतीय जनता को अनेक कठिनाइयों और कुंठाओं का सामना करना पड़ा। सरकार के संरक्षण में चलती हुई चोरबाज़ारी और भ्रष्टाचार से साधारण जनता पीड़ित थी। मई, १९४५ में युद्ध समाप्त हुआ। जून में कांग्रेस के नेता छोड़ दिए गये। सारे देश में उत्साह की नई लहर आ गई।

इन्हीं दिनों में लालकिले में बन्दी आज़ाद हिन्द सेना के नायकों का मुक़दमा शुरू हुआ। जब इन वीरों की शौर्य-गाथाएँ प्रकाश में आईं तो सारी जनता का प्यार उन पर उमड़ पड़ा। उसी समय हवाई दुर्घटना में भारत के परमवीर सपूत सुभाषचन्द्र बोस की मृत्यु के समाचार से सम्पूर्ण भारत पर अवसाद के बादल छा गये। उनके कठिन प्रवास की दुखद कहानियों को सुनकर यह अवसाद क्रोध में बदल गया। इस प्रकार युद्ध समाप्त होते-होते भारत में फिर क्रान्ति की उत्तेजना चारों ओर व्याप्त हो गई।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति और उससे उत्पन्न समस्याएँ

अन्ततोगत्वा, इंग्लैंड में मज़दूर दल के नये मन्त्रिमण्डल ने भारत को स्वतन्त्रता देने का निश्चय किया। परन्तु, इस निर्णय के साथ ही कुछ पुरानी समस्याएँ नई प्रबलता के साथ सामने आ गईं। मुस्लिम लीग के नेता मोहम्मद अली जिन्ना की संकीर्ण दृष्टि के कारण पूरे देश में साम्प्रदायिक दंगे ज़ोर पकड़ने लगे। ब्रिटिश सरकार भी मुसलमानों की हठधर्मी, संकीर्णता और स्वार्थनीति का लाभ उठाकर उनकी पीठ ठोंककर कांग्रेस को नीचा दिखाती रही। मिस्टर जिन्ना की नीति भारत की स्वतन्त्रता के मार्ग में पहाड़ बनकर खड़ी हो गई। उनके मज़हबी पागलपन के सामने अनेक तर्क और विवेकपूर्ण प्रस्ताव असफल होकर रह गये। वे 'भारत छोड़ो' के स्थान पर 'भारत को काटो तब छोड़ो' का नारा लगाने लगे। श्री राजगोपालाचार्य ने रूस के संविधान के अनुकरण पर कांग्रेस-लीग सहयोग के लिये जो फार्मूला बनाया उसे भी मि० जिन्ना ने रद्द कर दिया। अखण्ड भारत की स्वीकृति भी उन्हें मान्य नहीं थी। इस विषय पर गांधीजी के साथ भी उनकी वार्ता दीर्घकाल तक चलने के बाद टूट गई। गांधी-जिन्ना वार्ता की असफलता के बाद देश का वातावरण बहुत संकटपूर्ण हो गया। कहीं-कहीं तो गृहयुद्ध की चर्चा भी चलने लगी।

भारत की स्वतन्त्रता के सम्बन्ध में आये हुए कैबिनेट मिशन ने जो प्रस्ताव रखे, उन्हें भी मिस्टर जिन्ना ने ठुकरा दिया और १६ अगस्त, १६४६ को शस्त्र-प्रयोग द्वारा पाकिस्तान बनाने का प्रस्ताव पास किया। उसके बाद ही देशभर में साम्प्रदायिकता की आग लग गई। बंगाल में तीन दिन तक नरमेध चलता रहा। नोआखाली में, मज़हबी पागलपन में मनुष्य भेड़िये बन गये जिनकी हिंसा की चिनगारियों में वहाँ की असहाय जनता भस्म हो रही थी। महात्मा गांधी की आध्यात्मिक शक्ति और निर्भय व्यक्तित्व ही अब उनके लिए एकमात्र सहारा रह गया था।

स्वतन्त्रता की घटना के साथ ही, देश का विभाजन तथा गांधीजी का निर्वाण हुआ, और भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के सबसे मुख्य अध्याय का उपसंहार हुआ। गांधी-युग समाप्त हुआ और नेहरू-युग आरम्भ हुआ। 'मुक्ति यज्ञ' में गांधी-युग की इन्हीं घटनाओं और उनके प्रेरणा-स्रोतों का

काव्यात्मक आख्यान किया गया है

'मुक्ति यज्ञ' : एक विश्लेषण

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, 'मुक्ति यज्ञ' एक स्वतन्त्र कृति न होकर पंतजी के महाकाव्य 'लोकायतन' का एक अंग है। परन्तु, इससे इस कृति की महत्ता में कोई बाधा नहीं आती। भारतवर्ष के इतिहास में भारतीय स्वातन्त्र्य के इस संघर्ष का इतिहास स्वर्णाक्षरों में लिखा जायेगा। पंतजी ने पहली बार उस युग की घटनाओं को आद्योपान्त ऐतिहासिक दृष्टि से काव्यबद्ध किया है। अभी तक राष्ट्रीय सांस्कृतिक कविता के नाम पर अधिकतर भावात्मक प्रगीतों की ही रचना हुई थी, जहाँ गांधी-युग की भावात्मक प्रतिक्रियाओं का चित्रण तो काव्य में हुआ था, परन्तु उसके सैद्धान्तिक और व्यावहारात्मक पक्ष को ऐतिहासिक और सामाजिक पृष्ठभूमि में नहीं उतारा गया था। 'मुक्ति यज्ञ' इस अभीष्ट से लिखी हुई पहली कृति है। इस कृति को हम परम्परागत काव्य-रूपों के अन्तर्गत नहीं रख सकते, क्योंकि इसमें कवि का उद्देश्य न तो किसी कथानक को चमत्कारपूर्ण ढँग से नियोजित करना है और न किन्हीं पात्रों का चरित्र-चित्रण करना। अधिकतर आधुनिक प्रबन्ध-काव्यों की कथा पुराणों और इतिहास से ग्रहण की गई है और उनके कवियों ने उन्हें आधुनिक विचारधाराओं और भावनाओं के बीच में से उभारने की कोशिश की है, परन्तु 'मुक्ति यज्ञ' के कवि ने अपनी दृष्टि प्राचीन इतिहास और पुराण से हटाकर आधुनिक इतिहास से काव्य-सामग्री ग्रहण की है। इस दृष्टि से यह अपने ढँग की अकेली कृति है। इस कविता के नायक का रूप भी परम्परागत नहीं है। यह कविता व्यक्तिप्रधान न होकर समष्टि-प्रधान है, इसलिये उसके नायक महात्मा गांधी के व्यक्तित्व का वही अंश उभारा गया है, जो भारतीय जनता को शक्ति और प्रेरणा देता है। व्यक्ति गांधी का चित्रण कवि का ध्येय नहीं है—राष्ट्रपिता और राष्ट्रनायक गांधी 'मुक्ति यज्ञ' के मुख्य पुरोधा हैं। पिछले प्रबन्ध-काव्यों की तरह इसमें घटनाओं का उतार-चढ़ाव और पूर्वापर सम्बन्ध इत्यादि भी नहीं है। इस कृति की एक ही मुख्य घटना है—सन् १६२१ से १६४७ तक की स्वतन्त्रता की लड़ाई। इसी एक घटना के फैलाव में बहुसंख्यक घटनाओं और कई विचारधाराओं को

समाहित करने का प्रयत्न किया गया है। इन विचारधाराओं में सबसे प्रधान है गांधीवादी दर्शन जिसे पहले कवि राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार करता है और आगे चलकर उसका विस्तार मानवतावाद और विश्वबन्धुत्व तक कर देता है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात इस सम्बन्ध में यह है कि इस कविता में काल्पनिक तत्त्वों का समावेश प्राय: बिलकुल नहीं किया गया है, न आख्यान को प्रस्तुत करने में और न चरित्र-चित्रण में। इतिहास की प्रामाणिकता की रक्षा करते हुए पंतजी ने सत्याग्रह आन्दोलन का चित्रण काव्यात्मक ढँग से तो किया ही है, गांधी-दर्शन की आत्मिक और आध्यात्मिक दृष्टि को भी विना बोझिल बनाये हुए व्यक्त किया है।

'मुक्ति यज्ञ' की भाषा-शैली में एक प्रौढ़ कवि की परिपक्व व्यंजना-शक्ति का परिचय मिलता है। 'मुक्ति यज्ञ' में गांधी-युग के स्वर्ण-इतिहास का काव्यात्मक आलेख है; अभी तक यह युग समसामयिक काल की सीमा में आता था। उसकी घटनाएँ और व्यक्तित्व जन मानस के बहुत निकट थे, पर आगे आनेवाली पीढ़ी के विद्यार्थियों और नवयुवकों के लिए, यह युग इतिहास का पृष्ठ बन गया है, ऐसा पृष्ठ जिसके राम और कृष्ण की परम्पराएँ समय की छलनी में छनकर गांधी के माध्यम से अधिक जीवन्त और महत्त्व-पूर्ण हो उठी हैं। यह बात हमेशा ध्यान में रखना चाहिए कि पंत मूलत: सौन्दर्य-चेतना के कवि हैं, और इस चेतना के निर्माण में प्रकृति का विशेष योगदान रहा है। 'लोकायतन' में अनेक स्थलों पर प्रकृति-चित्रण मिलता है पर जीवन की भाँति प्रकृति के प्रति भी कवि की चेतना में एक सहज-सात्विक भावना का समावेश हो गया है। परन्तु, मुक्ति यज्ञ प्रसंग में प्रकृति-चित्रण के लिए कोई अवकाश नहीं था, यहाँ तो उनकी सामाजिक चेतना ही प्रधान है। यद्यपि इस कृति में वर्णन स्वतन्त्रता की लड़ाई का ही है, परन्तु इन वर्णनों के भीतर से पंतजी की वह सार्वभौम दृष्टि भी झाँकती हुई दिखाई देती है जिसका आधार आत्मपरक मानववाद है। इस समाज-दर्शन में तत्वगत मूल्यों का महत्त्व बाह्य मूल्यों से अधिक है। महात्मा गांधी की दार्शनिक दृष्टि का विवेचन करते समय जैसे स्वाभाविक संस्कारवश पंतजी उसी दर्शन की बात करने लगते हैं जिसमें सामाजिक योग और त्याग, अनुराग और विराग का पूर्ण सन्तुलन है।

46395

'मुक्ति यज्ञ' की राष्ट्रीयता और देशभक्ति संकुचित नहीं है। वह भारत को विश्व की पृष्ठभूमि में ही रखकर देखते हैं। कई बार उन्होंने इस बात का संकेत किया है कि भारत की दासता केवल उसकी दासता नहीं पृथ्वी मात्र की नैतिक दासता थी। इसी प्रकार मुक्ति यज्ञ का धुआँ भी केवल भारत के आकाश को ही नहीं सम्पूर्ण विश्व को सुरभित करता है, क्योंकि 'मुक्ति यज्ञ' के हवनकुंड से उठनेवाले आलोक में भारत की महान सांस्कृतिक परम्पराओं के अगणित ज्योति खंड सम्मिलित हैं। विश्व की पृष्ठभूमि में भारत का ध्यान निरी बौद्धिक कल्पना और आदर्शवादी सिद्धान्तों पर आधारित नहीं है। भारतीय राजनीति में महात्मा गांधी के प्रभाव के फलस्वरूप यह प्रभाव हमें दाय में मिला है। महात्मा गांधी की मृत्यु के बाद न जाने कितनी बार पं० जवाहरलाल नेहरू ने यह बात दुहराई थी, कि "महात्मा गांधी ने हमें भारत के स्वातन्त्र्य और गौरव की रक्षा करते हुए दूसरों के साथ शान्ति और मित्र-भाव से रहने का उपदेश दिया है। आज संसार में स्थान-स्थान पर संघर्ष और द्वेष फैला हुआ है और सामने विनाश दिखाई दे रहा है, इसलिए हमें ऐसे प्रत्येक कार्य का जिससे यह द्वन्द्व कम हो, स्वागत करना चाहिए।" इस प्रकार 'मुक्ति यज्ञ' का विश्ववादी स्वर कोरा काल्पनिक नैतिकतावादी नहीं है।

जिस प्रकार 'मुक्ति यज्ञ' का प्रतिपाद्य और दृष्टिकोण पंतजी की शेष कृतियों से अलग है उसी प्रकार उसकी शैली भी उनके अन्य सभी काव्यों से भिन्न है। 'मुक्ति यज्ञ' की शैली मूर्त, अभिधात्मक और सीधी है। यहाँ कवि की दृष्टि कथ्य के महत्त्व पर अधिक, कथन की शैली पर कम टिकी है। उसको सँवारने की आवश्यकता नहीं समझी गई इसलिये अलंकार-योजना की ओर भी कवि ने विशेष ध्यान नहीं दिया है। अधिकतर अलंकारों का प्रयोग रूप-चित्रण के लिए नहीं विषय के व्याख्यान के लिये किया गया है। अनेक बार गांधी-दर्शन और गांधी-आन्दोलन की आध्यात्मिकता और शौर्य को व्यक्त करने के लिये पौराणिक आख्यानों पर आधृत रूपकों का सहारा लिया गया है। रजत चाँदनी, स्वर्णिम प्रभात और इन्द्रधनुषी रंगों के लिए 'मुक्ति यज्ञ' में अधिक अवकाश नहीं था, परन्तु जहाँ ज़रा-सा भी अवसर मिला है, छायावादी सौन्दर्य चेतना में गृहीत इस झिलमिलाती

हुई अलंकरण सामग्री का उपयोग 'मुक्ति यज्ञ' के समष्टि-प्रधान प्रतिपाद्य में भी किया गया है। एक उदाहरण लीजिए। राष्ट्र-मुक्ति के अवसर का आर्द्र-आलोकमय उल्लास इन्हीं उपकरणों के सहारे कितनी सफलता के साथ उभारा गया है!—

जन-मन आवेशों की विद्युत्
मत्त नाचती हर्ष घोष कर,
नभ झुक-झर मिलता सागर से,
सागर उड़ नभ उर देता भर!
इन्द्रधनुष सुर केतन करता
मुक्त तिरंगे का अभिवादन,
उड़-उड़ सित बक-पाँति शान्ति ध्वज
शुभ्र कांति से हरती लोचन!

'मुक्ति यज्ञ' में विराट-आधारफलक पर अनेक सुन्दर और प्रभावशाली चित्र खींचे गये हैं, परन्तु सौन्दर्य के सूक्ष्म उपकरणों के अंकन का अवकाश उसमें नहीं था। उसकी शैली में गम्भीर सामाजिक और दार्शनिक तत्त्वों की अभिव्यक्ति की पूर्ण क्षमता है। समष्टिपरक प्रतिपाद्य को जिस ऋजुता परन्तु प्रौढ़ता की आवश्यकता होती है, 'मुक्ति यज्ञ' की शैली में ये विशेषताएँ प्रचुरता से मिलती हैं। परिस्थितियों की अनेकरूपता और पृष्ठभूमि की विशालता के कारण 'मुक्ति यज्ञ' का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक बन गया है और उस व्यापकता के विभिन्न पहलुओं के समर्थ चित्रण में पंतजी की परिपक्व प्रतिभा का परिचय मिलता है। आकार की लघुता के बावजूद 'मुक्ति यज्ञ' की आत्मा में एक महाकाव्य-जैसी गरिमा है।

—सावित्री सिनहा

मुक्ति यज्ञ

अलिखित ही रह जाएगी तब
नव युग की गाथा निःसंशय,
जो भारत की मुक्ति कथा तुम
गाओ नहीं, गिरे, रस तन्मय !

कथा नहीं यह, कृच्छ्र साधना
भू जीवन मंगल की निश्चय,
सत्य अहिंसा का जय, कविते,
नव भू मानवता की युग जय !

कौन चल रहा वह नर भूधर
जन धरणी पर ऊर्ध्व चरण धर ?
ऋषि अगस्त्य-सा लवण सिन्धु को
पी हँस-हँस, अंजलि-पुट में भर !

तुम प्राणों से लवण धरणि के
शुभ्र आत्म-बल करो संगठित—
तेजोमय सात्विक वाणी में
कौन सत्य करता उद्घोषित !

भू-जीवन लावण्य-सिन्धु यह,
लोक लवण रस से संपोषित,
लवण प्रतीक स्वराज्य मुक्ति का,
लवण सिन्धु-अंचल में संचित !

शक्ति शूल, दर्पित लवणासुर,
फूल अहिंसा, करो पराजित,
मुक्त जघन्य लवण-कर से हो
लवण राष्ट्र का करो प्रमाणित !

लवण न वज्र कठोर मुष्टि में—
दृढ़ संकल्प, सत्य अपराजित,
जन्म मरण क्षण, आत्म वह्नि कण,
जो वाड़व बन सकता जीवित !

कौन छीन सकता मुट्ठी से
सत्याग्रह का लवण—मुक्ति-पण,
प्राण छूट जाएँ, छूटेगी
आन न, व्रत भू-पथ का साधन !

वह प्रसिद्ध दांडी यात्रा थी
जन के राम गए थे फिर वन,
सिन्धु तीर पर लक्ष्य विश्व का
दांडी ग्राम बना बलि प्रांगण !

लवण द्वीप में थी सागर के
लोक मुक्ति बंदिनी, विमूर्छित,

अत्याचार, अनय, शोषण के,
रक्त खड्ग दैत्यों से परिवृत !

नमक बनाना ध्येय नहीं था—
तीस कोटि भारत जनगण का
वह प्रतीक विद्रोह पर्व था,
दृश्य ऐतिहासिक युग क्षण का !

गिने-चुने साधक सँग लेकर
बढ़े असंख्य चरण, दो पग बन,
वह प्रेरित स्वर्गिक मुहूर्त था
जड़ भ शिला बनी नव चेतन !

उन्नत मस्तक पर नर वर के
रक्त तिलक रोली का शोभित
भारतीय स्वातन्त्र्य सूर्य-सा
पूर्व भाल पर लगता दीपित !

वह चौबीस दिनों का पथ व्रत
दो सौ मील किए पद पावन,
स्थल-स्थल पर रुक, पा जन पूजन,
दिया दीप्त सत्याग्रह दर्शन !

देख कूच वह, कूच कर गए
शासन के देवता बुद्धिहत,
बढ़ता अभय समग्र राष्ट्र था
एक व्यक्ति बन पर्वत-उन्नत !

शुभ्र मौन अभियान सत्य का—
जग प्रयाण करता जन-भू बल,
चकित दृष्टि देखता विश्व था
मूर्तिमान हो मानव मंगल !
प्राण त्याग दूँगा पथ पर ही
उठा सका मैं यदि न नमक-कर,
लौट न आश्रम में आऊँगा,
जो स्वराज्य ला सका नहीं घर !
वीरोचित वर आवेशों से
सुलग रहा था बापू का मन,
पदयात्रा को निकले जब वह
व्याकुल थे जन, पुलकित सुरगण!
वह प्रकाश - गति से द्रुतगामी
अहिंसकों का था पैदल दल,
फैल रही थी वन दावा-सी
जन जागृति पग-पग पर प्रतिपल!
भार-मुक्त लगती जन धरणी,
जन मन उठ, उड़ता हो ऊपर,
पशु बल के जड़ तमस-क्षेत्र में
आत्म तेज चलता हो भू पर !

कितने ही सोए युग सहसा
जाग उठे, वह था अपूर्व क्षण,

कोटि जनों का, कोटि युगों का
वह अद्भुत नव पुनरुज्जीवन !

लोक प्रगति का देवदूत वह
तीस कोटि का रहा कृती जन,
विश्व चमत्कृत सोच रहा था
क्या भारत की सिद्धि, साध्य धन ?

दया द्रवित था हुआ स्वर्ग उर
दक्षिण अफ्रीका की भू पर
जहाँ प्रवासी भारत सहता
गोरों के उत्पात निरन्तर !

वहीं प्रथम सत्याग्रह असि को
युगनायक ने धरा सान पर
नम्र अवज्ञा से जय पायी
अन्यायी का क्रूर मान हर !

मन जलता विद्रोह वह्नि में,
हृदय क्षमा सागर था शीतल,
घृणा पाप से करता युग नर,
पापी दुर्बल का था संबल !

राजनीति के कृमि कर्दम में
संस्कृति का केतन कर स्थापित
धोने आया वह भू किल्विष
सत्य अहिंसा पावक से सित !

हिंस्र जगत में उगा महत् वह
मनुज दया का माखन पर्वत,

देखा सम्मुख काल ग्राह से
कवलित स्वर्गवाह गज भारत !
शुभ्र तिमिर के आत्म गर्त में
गिरा युगों से वह सिर के बल
कर्म प्रेरणा शून्य, विरागी,
अंध रूढ़ियों का जड़ जंगल !
जन समाज से विमुख, स्वार्थपर,
जाति पाँति पथ मत में खंडित,
विश्व विरत वह, आत्म मुक्ति रत,
दुख दारिद्रय नरक, जीवित-मृत !
देख रहा था जग विस्मय हत
पुण्य भूमि का नव्य जागरण,
युग-युग के वाष्पों से अमलिन,
सत्य दीप्त था अंतर-दर्पण !
काल जीर्ण धूसर खँडहर से
आभा रेखाओं में अंकित,
जीवन का प्रासाद अलौकिक
जाग रहा था पूर्ण अखंडित !
मनः कक्ष था प्रज्ञा विस्तृत,
हृदय कोष्ठ प्रेमाऽमृत सिंचित,
सिर पर स्वर्णिम सत्य कलश था
अक्षय आत्म ज्योति से दीपित !
नया चेतना पृष्ठ खुला हो
मिटा भेद भय, मन का संशय,

हिंस्र शक्ति से मत्त जगत को
मिला प्रेम बल का नव परिचय !

देश राष्ट्र में भक्त धरा पर
हँसने को था नव स्वर्णोदय—
देख रहे थे शोषक शोषित
मनुज सत्य का महत् समन्वय !

अन्तरैक्य में बँध मानवता
धरती पर रह सकती जीवित,
बाह्य विविधता, बहु की समता
जिसके बल पर ही अवलंबित !

नम्र अहिंसा की क्षमता से
दैन्य, अनय, अघ पर जय पाकर
मनुष्यत्व था जन्म ले रहा
पाशवता की क्रूर क्रोड़ भर !

विश्व शिखर पर नए कल्प का
उदय हो रहा था नव पूषण,
मनुज अहं की हिंस्र वृत्ति पर
फहरा चित् स्वर्णिम जय केतन !

आत्म शक्ति के सौम्य तेज से
कँपता अरि का अंतर थर-थर,
कहाँ छिपाए निज कुरूप मुख
पशु बल, लोक लाज से मर-मर !

सोच रहे थे जग के बौद्धिक
कैसा अद्भुत, रक्त हीन रण,

अस्त्रहीन जन हँस-हँस करते
प्रतिपक्षी को आत्म समर्पण ! १५६
क्या भू की उपलब्धि युगों की
कैसा रहः सूर्य वह गोपन ?
आत्मा की अनुभूति अलौकिक,
श्रद्धा आस्था का भू जीवन ! १६०
घृणा घृणा से नहीं मरेगी,
वल प्रयोग पशु साधन निर्दय,
हिंसा पर निर्मित भू संस्कृति
मानवीय होगी न, मुझे भय ! १६४
जीवन मूल्य विकृत हो भय से
मानव सुख नित करते कुंठित,
काम, क्रोध, कटु राग द्वेष का
नरक धरा पथ, कलह कंटकित ! १६८
भारतीय स्वातन्त्र्य युद्ध था
मनुष्यत्व का भू पर युग रण,
अंतः रिक्त, वहिः समृद्ध जग
हिंसा स्पर्धा का था प्रांगण ! १७२
भूत तमस में खोए जन को
आत्मा में होना था केन्द्रित,
देह प्राण मन के पिंडों को
हृदय स्पर्श पा पुनरुज्जीवित ! १७६

सत्य अहिंसा से वे सविनय
युग जन का करते संचालन,
हिंसक, पाशवता के पूजक
चीन्हें मानवता का आनन !

किंतु, हिंस्र पशु था भूचर नर
वज्र क्रूर उसका विमूढ़ मन,
मनुज रक्त का प्यासा कटु उर,
दृष्टि हीन पुट अंतर - लोचन !

दमन चक्र चल पड़ा निरंकुश
कुत्सित था नर पशु का नर्तन,
अमानुषी पाशव नृशंसता,
रोमांचक आसुरी प्रदर्शन !

अस्त्रहीन निर्दोष जनों पर
अंध हिंस्र बल का प्रहार खर,
सौम्य सजग, अनुशिष्ट मनों पर
वह था अत्याचार भयंकर !

चरु की स्निग्ध घृताहुति पा ज्यों
हो उठती मख वह्नि प्रज्वलित,
विनत अहिंसा की नर बलि पा
पशु का दर्प हुआ उत्तेजित !

नमक छिड़कता कुमति कटे पर
क्रूर कृत्य को बना क्रूरतर
देह दंड के सँग प्रचंड अरि
स्वर्ग खंड को अपमानित कर !

भारत नायक को कारा में
ठूँस, दस्यु ने सोचा—दुर्धर
ज्वार कुचल देगा समुद्र का
वह जन शशि को पिंजर में धर !

ज्ञात न उसको भारत आत्मा
जनमी कारागृह के भीतर—
बाहर भी बंदी ही थे जन,
उन्हें न था कृष्णायन का डर !

जनगण के नेताओं को चुन
बन्द किया क्या, जड़ मति शासन,
भारत की वन्दी आत्मा को
मुक्त कर दिया, निर्भय अब मन !

लहरों पर लहरें अदम्य ज्यों
टकरातीं तट से झंझा हत
अहिंसकों की भीड़ टूटती
लवण राशि पर, तन क्षत-विक्षत !

लवण उदधि में, लवण अवनि में,
लवण गया था अंबर में भर,
लवण वायु पंखों पर उड़ता,
लवण छा गया था जन मन पर !

स्वाभिमान, सर्वस्व देश का
लवण प्रेरण का बन पर्वत
जड़ से चेतन शक्ति बन गया,
राष्ट्र मुक्ति का वाहक शाश्वत !

सन् सत्तावन का विप्लव था
लोक द्रोह से प्रेरित निश्चित,
वन दावा-सा फैल, बुझा जो
जन भू बल था तब न संगठित !

सामंती उच्छ्वास रहा वह
राष्ट्रिय आदर्शों से विरहित,
आंग्लों की बर्बरता अब तक
कुलिश नोक से उर में अंकित !

टोपे था वीरों की टोपी,
रानी शीर्ष-मुकुट शौर्य-स्मित,
अपने ही पुत्रों की असि से
भारत माँ तब हुई पराजित !

गोरों का बदला नृशंस था,
जाति - दर्प से थे वे पीड़ित,
हत्यारे युग से शिक्षा ले,
जन मन उसको कर दे विस्मृत !

सामंती विद्रोह रहा वह
अभिनव वैज्ञानिक युग के प्रति,
रीढ़ - भग्न भू - परंपरा की
मोड़ रूढ़िगत दी जिसने गति !

लोक चेतना लगी खोजने
नव युग संयोजन, स्वर संगति,
छूटा मोह मृतक अतीत का
देख विश्व मुख चेती जन मति !

शांत शिष्ट सब रहे देश जन
बापू के कारा बंधन पर,
उनका था आदेश, व्रतीजन
रचना कार्य करें रह तत्पर ! २५२

राष्ट्र संगठन का अनुशासन
प्राण,-कार्य क्षमता का दर्पण,
सत्याग्रह का भाव पक्ष ध्रुव
कर्म शक्ति का सात्विक सर्जन ! २५६

शुद्ध अहिंसा का प्रतीक शुचि
खादी, - कातें पूत सूत जन,
तकली चरखे, करघे ढाँपें
नंगे भूखे भारत का तन ! २६०

धरना दें नारियाँ, करें सब
मदिरा अस्पृश्यता निवारण,
त्याग विदेशी वस्त्र, कात बिन
हों सम्पन्न दरिद्रनरायन ! २६४

सक्रिय, मुखर, अहिंसा हो अब
सत्याग्रह का कर आवाहन,
मूक अहिंसा का युग बीता
वह थी जन शिक्षा की साधन ! २६८

अस्त्र-शस्त्र से सज्जित नर पशु
शृंगी दंष्ट्रा पशु से भीषण,
मनुष्यत्व की ज्योति जगाने
निर्भय शीश करें जन अर्पण ! २७२

घृणा पंक में सना धरा मुख
प्रेम रक्त से कर प्रक्षालन,
अंध, अहं-कुंठित भू मन के
स्वर्ग दया से भरें नरक व्रण !

खुले स्वार्थ-तम-रुद्ध हृदय में
आत्म त्याग का नव वातायन,
देश जाति खंडित भू देखे
राम राज्य का ज्योति जागरण !

राजद्रोह अब धर्म हमारा,
भू अभिशाप विदेशी शासन,
वह भौतिक, नैतिक, आध्यात्मिक
महा नाश का दारुण कारण !

महा पाप, क्षय, काल कूट विष,
जन जिसके वश जड़ मूर्छित मृत,
सामाजिक सांस्कृतिक रक्त के
शोषण के शव, कृमिवत् जीवित !

हँसते जन अरि बाहर भीतर
कह उसको नमकीन मुक्ति रण,
यह स्वराज्य भी बड़ा सलोना
होगा, कहते स्वामि भक्त जन !

क्या था तब भारत ? शतियों का
दैन्य दासता दुख का खँडहर,

पर-शिक्षा संस्कृति में पोषित,
धन जन मन से शोषित, जर्जर !
खाद्य वस्तु, अनगढ़ द्रव्यों का
वह अनंत-मुख स्रोत निरंतर,
चाटुकरों, पर-रण वीरों का
क्रीत दास, प्रभु भक्तों का घर !

प्राण दान करने प्रभु के हित
जिसके मृत सुत रहते तत्पर,
बेच राष्ट्र सम्मान उसे, जो
ले स्वतन्त्रता स्वर्ग श्वास हर !

मध्य युगों से जाति पाँतियों
मुंड मतों में बँटे क्षुद्र जन,
रूढ़ि रीतियों के घेरों में
बंद, अपरिवर्तन कामी मन !

कुल वंशों के, गोत्र श्रेणि के
ढीठ दर्प के खोले विष फण,
संप्रदाय के कुंडल मारे
निष्क्रिय अजगर,-अजा गल-स्तन !

स्वर्ण भूमि भारत, जिसके पद
धोता नत मस्तक रत्नाकर,
निर्निमेष रहता जग, जिसकी
अतुल स्वर्ग संपदा निरख कर !

जिसके उर में खुला स्वर्ग का
द्वार, दीप्त चैतन्य दिगंतर,

आज पराजित, आत्म मूढ़ वह,
दिग् गज-सा पथराया भू पर !

ह्रास तिमिर से ग्रस्त, अविद्या
त्रस्त,-अर्थ पद मद हित कातर,
जन समाज से विरत, व्यक्ति रत,
राग द्वेष में भक्त परस्पर !

शोषक के रक्षक, जन वंचक,
भग्न रीढ़ जिसके विपन्न नर—
ऐसा भारत बन सकता था
प्रभु सिंहासन की सीढ़ी भर !

भारत ही के क्रीत दास सुत
मा का उर करते पद मर्दित
नत सिर पर प्रभु पद त्राण थे
शिरस्त्राण-से जिनके शोभित !

शिष्ट, मुक्ति के व्रती अहिंसक
दिखलाते अप्रतिहत साहस,
सत्याग्रह के स्वर्ग दूत हँस
धोते शतियों का भू कल्मष !

उद्यत जाग्रत भारत सारा
कारागृह में था तब जीवित,
बना श्मशान महान देश को
साँस भार ढोते बाहर मृत !

हृदयवान् सब घायल थे तब,
हृदयहीन पत्थर, जन घातक,

अग्नि वृष्टि सहते मर्माहत
मुक्ति स्वाति के याचक चातक !

लगा बाह्य तम के सागर में
बुझ न जाय सात्विक प्रकाश कण,
पर, वह बाड़व बन कर धधका
आत्मा का स्फुलिंग नव चेतन !

भारत के कोने कोने में
फैल गया संदेश मुक्ति का,
उलटा ही फल हुआ जगत में
अन्यायी की दमन युक्ति का !

धरसाना फिर, लुटा बडाला,—
पुण्य लूटते देश भक्त जन,
दृष्टि शून्य अरि ! तीर्थ क्षेत्र को
बना दिया शोणित रण प्रांगण !

इधर चलीं झट लाठी गोली,
फूटे स्फोटक भर दिग् गर्जन,
हड़तालें, प्रतिरोध सभाएँ
उधर देश में चलीं प्रतिक्षण !

स्वर्ग - धौत, बलवती बनी भू
सत्याग्रह में रक्त-स्नान कर,
हुए गौरवान्वित निरस्त्र जन
मुक्ति यज्ञ हित आत्म दान कर !

महत् त्याग की रजत वह्नि में
स्वर्ण तप्त हो रुग्ण प्राण मन
भारतीय चैतन्य तेज के
पात्र बन सके जीवन पावन ! ३६८

सच्चे साहस, शौर्य त्याग से
दीप्त, युवतियाँ थीं उन्मेषित,
जगी अहिंसा मूर्त रूप धर
भारत लक्ष्मी में अभिषेकित ! ३७२

कोमल अंग भले हों विक्षत,
धैर्य, मनोबल में अप्रतिहत,
पहन केसरी बाने फिरतीं
रण चंडी बन, लिए मुक्ति व्रत ! ३७६

शुद्ध प्रेरणा से ही निर्मित
करते लोक पुरुष भावी पथ,
उन्हें पूर्व कल्पना न रहती
क्या स्वराज्य का निश्चित इति अथ ! ३८०

अंतरतम की ज्योति किरण से
हो उठते मन बुद्धि प्रकाशित,
शुभ्र ध्येय से उन्मेषित वे
लोक कर्म करते निर्धारित ! ३८४

कोलाहल के कृत्रिम युग में
मौन दिवस रखते वर युग-नर,
वागिच्छा पर संयम रखने,—
सत्य न बन जाए आडंबर ! ३८८

मुखर तर्क के शब्दजाल में
भटक न खो जाए अंतः स्वर,
गुरुता से सौजन्य, बुद्धि से
हृदय - बोध था उनको प्रियतर ! ३९२

युद्ध नीति बाने में लगते
मूर्त अहिंसा सत्य अलौकिक,
पशुबल के हो हिंस्र क्षेत्र पर
आत्म शक्ति की जय भौगोलिक ! ३९६

भौतिकता के प्रतीकार में
आध्यात्मिकता का सक्रिय रण
मनुज हृदय परिवर्तन करता·
प्रेम स्पर्श से पूज घृणा व्रण ! ४००

कारा में भी रहे कर्म - रत,
मुक्तात्मा को क्या भव बंधन ?
किया आमरण व्रत, अजेय रह,
बना ऐतिहासिक वह अनशन ! ४०४

भारत आत्मा एक अखंडित,—
रहें हिन्दुओं में ही हरिजन,
जाति वर्ण अघ पोंछ, चाहते
वे संयुक्त रहें भू जनगण ! ४०८

विजय हुई भारत आत्मा की
खंडित नहीं हुआ जन भू मन,

शांति निकेतन के ऋषि आए
व्रत का करवाने उद्यापन ! ४१२

छुआछूत का भूत भगाने
किया व्रती ने दृढ़ आंदोलन,
हिले द्विजों के रुद्ध हृदय पट,
खुले मंदिरों के जड़ प्रांगण ! ४१६

भारत मस्तक का कलंक यह—
जाति पाँतियों में जन खंडित,
जहाँ मनुज अस्पृश्य चरण - रज,
राष्ट्र रहे वह कैसे जीवित ! ४२०

वर्णों की पावन कारा से
मुक्त हुआ चिर बंदी ईश्वर,
देखा सब ने युग प्रकाश में
अंश ईश के निखिल चराचर ! ४२४

पिछड़े भीरु नगर, गाँवों ने
फहराया आस्था का केतन,
तर्क बुद्धि अटकी, श्रद्धा ने
कर्म वचन मन किया समर्पण ! ४२८

मतवादों के कुहरों से कढ़
कर्म शक्ति का जागा पूषण,
चमत्कार कुछ हुआ अकल्पित
शिविर बन गए ग्राम, खेत, वन ! ४३२

काल ध्वस्त जर्जर जन खँडहर
जाग उठा बन जीवन मंदिर,

स्वर्ण कलश धर यशः भाल पर
खड़ी हो गईं गिरी भित्ति फिर !
शतियों के हत पतझर वन में
फूट पड़ा मधु-यौवन शोणित,
नग्न, रक्त शोषित तन पंजर
हुए नव्य जीवन उन्मेषित !

प्रथम देश स्वाधीन बन सके
यही परम हो लक्ष्य हमारा,
फूँकें युग-जागरण शंख हम
जन स्वतन्त्रता का दे नारा !
मुक्त देश के सँग ही होंगे
गाँव, मुक्त गाँवों के सँग जन,
साथ कटेंगे सब के बंधन
होंगे सँग ही कष्ट निवारण !
देश जातियों के जीवन में
आते ऐसे महत् क्रान्ति क्षण,
जीर्ण सभ्यता के शव में जव
बहने लगता शोणित चेतन !
पतझर यह, नव बीज बो रहा
शिशिर प्रभंजन उड़ा जीर्ण दल,
नग्न दैन्य पंजर से वन के
झाँक रहा सोया मधु मंगल !

आओ, हम गंगा जल छूकर
जन सेवा का लें पवित्र व्रत,
हम स्वदेश हित जिएँ - मरेंगे
जब तक हो स्वाधीन न भारत !

सुनते हो आह्वान देश का
प्रकट हुए जन नायक गांधी,
घायल रुँधी हवा गढ़हों की
बनने को अब पागल आँधी !

लिए अहिंसा युग केतन वह
खड़े सत्य वट नीचे निर्भय,
स्फटिक शुभ्र स्वर में पुकारते
चलता धरती पर अरुणोदय !

जाग उठी सोई जन धरणी
लोट रही असि-पथ चरणों पर,
मौन भंग कर गूँज उठे गिरि,
गरज रहे भूखे भू - गह्वर !

करवट लेता रुद्ध सिन्धु अब,
निकल पड़े विवरों से जनगण,
बढ़ते अगणित चरण लक्ष्य पर,
प्रतिध्वनित पुर पथ, गृह प्रांगण !

दौड़ रहा भूकम्प धरा पर,
उमड़ रहे आवेशों के घन,
अन्धकार गर्तों में आहत
चीत्कारें भरता जग प्रतिक्षण !

टूट रहा अन्याय वज्र - सा
अग्नि - मुष्टि हो रक्त लौह घन,
मृषा सत्य में, दम्भ विनय में,
दुरित न्याय में छिड़ा मृत्यु रण !

सुनो, महात्मा गांधी की जय,
चिल्लाते गूँगे भू रज कण,
भारत का ही यह न मुक्ति रण
विश्व मुक्ति का आया शुभ क्षण !

आत्म त्याग की यज्ञ भूमि यह
अन्ध स्वार्थ रत भू संघर्षण,
यन्त्रों से पद दलित धरा अब
सत्य पंथ नव करती घोषण !

स्वर्ग दूत, युग संत, नीतिविद्,
भारत के दैदीप्य तपोबल,
शतियों की साधना सिद्धि वह
आत्मा के प्रतिनिधि तेजोज्वल !

संस्कृति के नवनीत, त्याग की
मूर्ति, अहिंसा ज्योति, सत्य व्रत,
लोक पुरुष, स्थितप्रज्ञ, स्नेह घन,
युग नायक, निष्काम कर्म रत !

वज्र - अस्थि, तप दृढ़ तन पंजर,
अग्नि वर्ण त्वच मंडित भास्वर,
शील शुभ्र, देवोपम विग्रह,
मेरु शिखर - से चलते भू पर !

उन्नत जन मन देवदारु-से
स्वर्ग छत्र सिर पर तारक नभ,
सौम्य आस्य, उन्मुक्त हास्यमय,
प्रातः रवि - सा स्निग्ध स्वर्णप्रभ ! ५०८

सत्याग्रह तृण - अस्त्र छोड़ते
वह सशक्त साम्राज्यवाद पर,
आसमुद्र पृथ्वी को जिसने
चूस लिया जन -गो को दुह कर ! ५१२

रक्तहीन व्रण करता उर में
दिव्य अस्त्र, कर अन्तर मंथन,
मनस्ताप के अश्रु वहाता
पिघल स्वार्थ कंठित उर पाहन ! ५१६

संस्कृति का वह शूल, अचेतन
आत्मा में चुभ करता चेतन,
तपः रश्मि शर मनोगुहा को
दीपित करता चीर तिमिर घन ! ५२०

अस्त्र-शस्त्र सज्जित मृत भू हित
मानव-करुणा धर लाई तन,
अग्नि स्पर्श पा, जन के भीतर
सुलग उठे सोया प्रकाश कण ! ५२४

मुक्ति युद्ध यह, मुक्ति चाहिए
भू को युग के अनाचार से,

दैन्य अविद्या घृणा द्वेष से,
भय संशय, मिथ्या प्रचार से !

मुक्ति शक्ति के अहंकार से,
खल नृशंस के पद प्रहार से,
मुक्ति पर्व यह, मुक्ति चाहिए
भौतिकता के अंधकार से !

गूँज रहा रण शंख, गरजती
भेरी, उड़ता सुरधनु केतन,
ऊर्ध्व असंख्य पगों से धरती
चलती, यह मानवता का रण !

विजय नाद से ध्वनित दिशाएँ,
सत्य सैन्य, जन करते स्वागत,
भरती अमृत अहिंसा विष व्रण,
देवपुत्र भू पर अभ्यागत !

तुमने देखा ही, नगरों में,
बढ़ता नित जाता आंदोलन,
आत्मदान के लिए मचलता
ज्ञान वृद्ध भारत का यौवन !

फहराता दिक् कीर्ति तिरंगा
इन्द्र धनुष-सा नभ में शोभित,
ध्वजा वंदना, मातृ अर्चना
गाता नव भारत का शोणित !

स्वाभिमान जिसमें स्वदेश का
स्वतः आत्म बलि हित वह तत्पर,

दमन कुचलता वात चक्र-सा,
उफन गरजता उठ जन सागर !

सभी सभ्य सम्भ्रान्त नागरिक
मुक्ति मूल्य देने को उद्यत,
बना वज्र प्राचीर देश अब
खड़ा मृत्यु सम्मुख अप्रतिहत !

मानव की संकल्प शक्ति में
बाहु शक्ति में छिड़ा तुमुल रण,
प्रथम बार सामूहिक आत्मा
जूझ रही नर पशु से भीषण !

इधर खड़े चिर सौम्य देवता,
उधर अड़ा उन्मत्त दैत्य दल,
शतियों में सक्रिय हो पाया
भू पर शुभ्र अहिंसा का बल !

अंध अहं गतिरोध कर रहा,
छू प्रकाश, पथ करता विस्तृत,
घृणा द्वेष की आहुति देती
बरसाती हँस प्रीति क्षमाऽमृत !

मृत्यु भीत रज-प्रकृति काँपती
पुरुष अमरता करता घोषित,
आँख मिचौनी खेल रहा युग,
विजय असत् पर सत् की निश्चित !

मुट्ठी भर हड्डियाँ बुलातीं—
छात्र निकल पड़ते सब बाहर,
लोग छोड़ घर-द्वार, मान पद,
हँस हँस बंदी-गृह देते भर !

झोंक आग में तन के कपड़े
गिरते पद पर पागल स्त्री-नर,
भेद कभी इतिहास कहेगा
कौन पुरुष चलता युग-भू पर !

देख रहा मैं, निखर रही भू
घृणा कुहासे से कढ़ बाहर,
नव ऊषा अंचल में लिपटा
हँसता शिशु युग-रवि दिग् भास्वर !

चहक रहे सूनी डालों पर
रंग मुखर पल्लव फड़का पर,
जन मन वन में मुक्ति चेतना
फूट रही बन नव कुसुमाकर !

आत्मा का स्वर्गिक पावक कण
सोया निष्प्रभ जन उर भीतर,
तुम को आँधी बनना होगा
जगे बुझी लौ, दौड़े भू पर !

छाया आज प्रमाद, लोभ, मद,
द्रोह मोह, नैराश्य, क्षोभ, डर,
देखोगे कल नरक तिमिर में
स्वर्ग ज्योति की छिपी धरोहर !

निज सुख-दुख अर्पित कर माँ को
लौह संगठित करो लोक बल,
जन स्वतन्त्रता के आँचल में
बँधा निखिल धरणी का मंगल ! ६००

मुक्त स्रोत जब तक न मिलेगा
स्वच्छ न होगा मलिन रुद्ध जल,
संघ शक्ति की बहिः शुद्धि ही
अन्तः शुद्धि,—न जल्पित केवल ! ६०४

एक दशक से चुका रहे सब
नगर जूझ भू माता का ऋण,
चुप न रहेंगे हम बलि - अज - से
खड़े प्रणत, मुँह में दाबे तृण ! ६०८

असहयोग आंदोलन में अब
आया वह अनिवार्य महत् क्षण,
फैल गाँवों में भू ज्वाला
धधक उठें खलियान, खेत, वन ! ६१२

जाओ, बंजर जन धरणी को
जोत, चलाओ पौरुष का हल,
लोहे को सोना कर देगी
छिपी स्पर्श-मणि उर में उज्ज्वल ! ६१६

जगे खेत खलियान, बाग फड़,
जगे बैल हँसिया हल विस्मित,

हाट बाट गोचर घर आँगन,
बापी पनघट जगे चमत्कृत !

मोट गड़ारी नार जगत जग
लगे माँडने मुक्ति शस्य स्मित,
अँगड़ाई ले जगा पुरातन
युग युग से जड़, निष्क्रिय, निद्रित !

कोई नृप हो हमें हानि क्या ?—
अब न सोचता कुंठित जन मन,
राम राज्य स्वप्नों में डूबे
थे यथार्थ दर्शी जन लोचन !

हाथ पैर धरती के अगणित
सहसा शाप मुक्त, नव चेतन,
जाग उठे पावक प्ररोह - से,
मुक्ति स्पृहा हो मत्त समीरण !

पृथ्वी - पुत्रों ने स्वराज्य को
आत्मदान निज दिया प्राणपण,
बिके खेत पुर द्वार, जले घर,
लुटे बहू - माँ - बहिनों के तन !

युद्ध शिविर बन गया देश सब
निःशस्त्रों पर सैनिक शासन,—
पशु बल के शत कुंडल बाँधे
काल सर्प साधे हो आसन !

क्षीरोदधि तज लवण जलधि में
सोते अब हरि कलि - भय कारण,
उन्हें जगाने गए महात्मा
सिन्धु तीर, करने स्तव पूजन !

लौटेंगे पाकर प्रभु-वर वे
कहते खेड़े पुरवे के जन,
भौतिक राक्षस से पीड़ित भू
उनके साथ गई सित गो बन !'

अंतिम साँसों की डोरी - से,
प्राण हीन केंचुल - से निःस्वर,
त्रस्त सैन्य अत्याचारों से
ऊँटों बैलों पर लादे घर !

लीक बाँध रेंगते डगर पर
नंगे भूखे बाल वृद्ध नर,—
गाँव उजड़ बनते निर्जन वन,
सर्वनाश का हो खर पतझर !

जन साधारण का सत्याग्रह
अलिखित पृष्ठ रहा युग-रण का,
आत्म-त्याग का पर्व अलौकिक,
उत्सर्गों का उत्सव जन का !

सामूहिक-कर भर दरिद्रता
बनी दिगंबर, रह अपराजित,
स्वतन्त्रता हित मर मिट जनता
हुई रक्त बलि दे महिमान्वित !

हाड़ माँस ठठरी में इतना
शौर्य वीर्य रह सकता पुंजित
बलिदानों की व्यग्र होड़ पर
शत्रु तिलमिला उठता विस्मित ! ६६८

धैर्य त्याग, सत् - शौर्य श्रेणि उठ
स्वर्ग क्षितिज को करती दीपित,
अमर शिखा थी मुक्ति चेतना—
जन शलभों - से होते अर्पित ! ६७२

अकस्मात् खर झंझा से हों
भूमिसात् पुर मठ घर छप्पर
छितर अँतड़ियों - से बिखरे थे
घास फूस बाँसों के टट्टर ! ६७६

घायल अंगों का जंगल थी
जनपद-भू, जन जीवन दूभर,
मृत मानव आत्मा के शव पर
नर्तन करता पशु-बल बर्बर ! ६८०

एक दशक बीता दुख संकट
भय संशय तम में, विषाद में,
शत्रु पैंतरे रहा बदलते
निज नृशंसता के प्रमाद में ! ६८४

चेता शनैः निरंकुश अरि-मन
लगी तिक्तता रक्त स्वाद में,

भारत हित में था युग-जन मत,
शुद्ध-ध्येय सित मुक्ति नाद में ! ६८८
डिगा नहीं भारत ध्रुव पथ से
पा झूठे रीते आश्वासन,
लिखे रह गए, काल पृष्ठ पर
रिक्त संधियों के आयोजन ! ६९२
राजनीति के कुटिल चक्र में
विश्व न्याय का कर आवाहन
अड़ा रहा वह सत्य शिखर-सा,—
जन भू मन का हो आरोहण ! ६९६

युग जीवन का हालाडोला
था विहार-भूकम्प चिह्न भर,
धूल धुंध से अंध क्षुब्ध मन,
जीवन आवेशों से जर्जर ! ७००
क्षोभ, रोष, अवसाद, निराशा
मंथित करते हत जन अंतर,
स्तंभित-सा हो गया काल था
रुद्ध नियति गति, छिन्न प्रगति-पर ! ७०४
भाग्यहीन हत पराधीन भू,
काल पड़ा बंगाल देश में
युग जीवन की नग्न चुनौती
लाई मृत्यु कराल वेश में ! ७०८

सदियों के पिचके पेटों ने
किया क्षुधार्त करुण वन रोदन,
था दुकाल निर्मम प्रतीक भर,
कब से भूखे भू के जनगण ! ७१२

क्या कर लेंगे सभ्य निहत्थे
व्यग्र सोचते शंकित मन जन,
आज उगलें, बम बरसा खल अरि
जो नगरों को कर दे निर्जन ! ७१६

ज्ञात न उनको, अहिंसकों की,
तप्त राख से उमड़ अग्नि घन
शस्त्र नद्ध साम्राज्यवाद को
फूँक, भस्म कर देंगे तत्क्षण ! ७२०

अन्यायी के क्रूर कृत्य से
जब विद्रोह भड़कता भीषण,
उस अन्तर्मन के विप्लव को
रोक नहीं पाते शत रावण ! ७२४

युद्ध नीति की मर्यादा भी
होती विश्व-मनस के आश्रित,
कुटिल कंस का निधन नियत रे,
फिर-फिर करता काल प्रमाणित ! ७२८

दैव दग्ध ऐसे ही क्षण में
पश्चिम के नभ में बल दर्पित

धूमकेतु उद्दंड उगा नव,
राष्ट्रों को करने आतंकित !

पूँजीवादी युग के बिल का
उद्धत फण, दारुण मणि विषधर
साम्राज्यों को लगा निगलने
दानवीय धर आकृति दुर्धर !

हिंसा प्रतिहिंसा से लोहा
लेती, युग मन का कर मंथन,
शक्ति शक्ति को नग्न रौंदती,
वह था जग हित आत्म-बोध क्षण !

नमक फूट कर लगा निकलने
चेता विजित मदांध शत्रु मन,—
स्वर्ग दाय - सी शुभ्र अहिंसा
निखर उठी संकट में पावन !

नमक मिर्च बहु लगा ग्राम जन
मित्र राष्ट्र का गाते परिभव,
अवचेतन में क्रुद्ध, मनाते
विजय धुरी-राष्ट्रों की नित नव !

सुज्ञ जानते, मनुज धरा पर
छिड़ा अशुभ-शुभ में फिर युग रण,
संकट क्षण में नहीं सुहाता
अरि का घाव दुखाना गोपन !

आंग्ल देश के प्रति वह केवल
क्षण आवेश रहा जन मन में,
प्रगति पुरस्सर राष्ट्र रहा वह
पूँजीवादी युग जीवन में ! ७५६

हृदयवान् थे आंग्ल, भले ही
हमें छेड़ना पड़ा न्याय रण,—
मुक्ति माँगती रक्तदान नित,
मुक्ति माँगती पूर्ण समर्पण ! ७६०

पर, साम्राज्य स्पृहा से पागल,
अरि न अशुभ के प्रति था जाग्रत्,
वह आर्थिक, नैतिक, आध्यात्मिक
शोषण था भारत भू का हृत ! ७६४

भू क्या थी, जर्जर जन पंजर,
दुख दारिद्रय अशिक्षा पीड़ित,
मानवता का युद्ध न था वह
भारत जन धन हित से प्रेरित ! ७६८

असत् भले हो, भू मंगल हित
पर, अनिवार्य प्रयोजन शासन,
सत्शासन क्या ? लोक श्रेय हित
लोक-शक्ति का लौह संगठन ! ७७२

दैव, विदेशी शासन से कब
संभव जनगण का हित साधन,
आत्म पराजित, पीड़ित, शापित—
पराधीन शोषित - शासित जन ! ७७६

औद्योगिक युग के उपक्रम में
स्थूल पदार्थों हित आकर्षित
पश्चिम ने छल-बल उद्यम से
किया विविध देशों को अर्जित !

जाति जीर्ण सामंती खँडहर
रहा मध्ययुग का तब भारत,
प्राची को वैज्ञानिक युग के
स्पर्शों से होना था जाग्रत् !

विश्व-युद्ध की छाया में अब
करते स्थित-धी युग-नर चिन्तन,—
क्या हो भारत नीति ? युद्ध को
मिले योग, छूटे न मुक्ति पण !

नहीं अहिंसा रण-पथ बाधक,
आत्म-नाश से श्रेष्ठ युद्ध-घन,
भारत जन जूझें अरि हित तब
काटें जब निज दुःसह बंधन !

वह स्वतन्त्र हो, समभागी हो
करे समर हित जन धन अर्पित,
स्वाभिमान का यही सत्य-पथ
युग प्रबुद्ध नर को था स्वीकृत !

अंतर्राष्ट्रिय युग-पट में भी
यही कर्म पथ था नय-विस्तृत
राष्ट्रियता अनिवार्य चरण रे,
बहुमुख भू जीवन विकास हित !

मित्रों का जय - कामी भारत
उनके प्रति सद्भाव विद्रवित
जन धन मन से विश्व युद्ध में
मित्र राष्ट्र के सँग था निश्चित ! ८०४

क्रीत दास रह, शोषक के हित
वरबस जन का देना शोणित
घोर अनैतिक, गर्हित स्थिति थी,—
प्रथम मुक्ति थी उसे अपेक्षित ! ८०८

अरि का अरि, कृमि तन का कृमि अब
ताल ठोंकता खड़ा द्वार पर,
बरमा मलया निगल, फेरता
गृद्ध दृष्टि भारत पर दुर्धर ! ८१२

हिंस्र क्रूर साम्राज्यवाद था,
पर नात्सी फ़ासिस्त क्रूरतर,
इन यांत्रिक दैत्यों के बौने
सैनिकवादी शिष्य भयंकर ! ८१६

निज प्रबुद्ध मत के विरुद्ध जन
युद्ध कर्म को होते वाधित,
अंध स्वार्थ के अग्निकुंड में
घास फूस खर तृण - से अर्पित ! ८२०

भारत के सम्मान योग्य था
वह विक्षोभ मूक जन मन में
प्रकट हुआ जो पुनः व्यक्तिगत
सत्याग्रह के प्रतिवर्तन में ! ८२४

जन को वाक् स्वातन्त्र्य चाहिए,—
दिया लोकनायक ने नारा,
विश्व युद्ध का अंतरंग रण—
मंच बन गया भारत सारा ! ८२८

विश्व-क्षितिज में अग्नि-शिखा से
अंकित भारत का नैतिक पण
जग के मनीषियों के मन का
बना आत्म चिन्तन का कारण ! ८३२

विफल हुए सब संधि-यत्न जब
विनय त्याग, प्रत्ययन, प्रबोधन,
रोटी के बदले शोषक से
भूखों ने जब पाए पाहन,— ८३६

जगा मन्यु, छेड़ा नर वर ने
भारत छोड़ो का अद्भुत रण,
खोल दिया क्षण में जन सम्मुख
ज्यों स्वराज्य का स्वर्णिम तोरण ! ८४०

तिल - तिल किया उन्होंने निर्मित
बाहर युग मत, भीतर जन मन,
स्वयं उतर आया ज्यों भू पर
भारत छोड़ो का आन्दोलन ! ८४४

भारत छोड़ो ? सहसा अरि को
नहीं हुआ विश्वास एक क्षण,

वह उद्घाप न था कौतुक भर
तीस कोटि जन प्रतिनिधि का पण ! ८४८

छोड़ो भारत को ईश्वर पर,
तुम्हें नहीं यदि आस्था प्रभु पर
तो छोड़ो विप्लव के हाथों,—
रक्तपात का उठे ववंडर ! ८५२

श्रेष्ठ अराजकता, बर्बरता,—
अधम दासता से छूटें नर,
एक बनेंगे, अरि के हटते
भारत भू जन, भेद भूलकर ! ८५६

नहीं साँस लेने का अवसर
अरि ने अब के दिया प्राणपण,
बापू के सँग उसी रात को
पकड़ लिए धर सब नेतागण ! ८६०

पथ दर्शक के बिना क्रोध से
अंध, क्षुब्ध मन, खुल खेले जन,
कोटि रूप धर कर युग नायक
करते हों जन-भू अरि से रण ! ८६४

विष पावक तम के समुद्र का
वह था जन युग जीवन मंथन,
क्रुद्ध दमन चल खर वात्या सा
करता निर्मम तांडव नर्तन ! ८६८

दानव डग धर वह जन मन की
हिल्लोलों का करता मर्दन,

भारत क्या था,—मूर्त दमन अहि
फूत्कारें भरता सहस्र फन ! ८७२

लगता, स्वेच्छाचार शौर्य पर
विजयी होगा, दंभ न्याय पर,
पीट, पेट के बल रेंगाते
नग्न निरीहों को प्रभु के चर ! ८७६

लाठी, बल्ले, कुन्दे, भाले
निःशस्त्रों का करते स्वागत,
प्रदर्शनों पर गोली चलतीं,
अश्रु वाष्प बम फटते शत शत ! ८८०

रेल पेल धक्कम धक्के में
कुट पिस बाल, युवक, नारी नर,
भारत छोड़ो—नारा देते,
क्षुधित भेड़ियों से न तनिक डर ! ८८४

अंधड़ झंझा - जव से मंथित
आहत अंगों के जन वन में,
हाथ पैर धड़ कटे, फटे सिर,
टूटे पंजर दिखते क्षण में ! ८८८

गलियों में जन को खदेड़ कर
घर-घर घुस पड़ते अरि बर्बर,
अत्याचार, बलात्कारों की
अकथनीय वह कथा भयंकर ! ८९२

आग लगा खल हाथ सेंकते
फूँक मुहल्ले, टोले, पुर, घर,
दानव का मुखड़ा खुल पड़ता
दस्यु सभ्यता के दुर्मुख पर !

घानी पेल, कुएँ से पानी
खींच, तोड़ते बन्दी पत्थर,
पिसते शत अभिजात जेल में
कुचल दमन पाटों में दुर्धर !

अहिंसकों का व्रत अनुशासन,—
हँसते पिट, जी खोल व्रती नर,
क्षुद्र क्रूर पशु बनता जितना
जगती पौरुष शिखा ऊर्ध्वतर !

हाट बाट की मुठभेड़ों में
सभा समाजों में सविनय जन
घृणित नृशंसों की घातें सह
मनुज हृदय छूते अविचल पण !

वह नव युग की प्रसव वेदना,
नव मानव संस्कृति का युग रण
आत्मदान का अभिलाषी था,
तपः पूत हो जिसमें भू - मन !

मिलें बंद, निःस्पंद हाट फड़—
श्रमिकों ने हथियार डाल कर
किया प्रचंड विरोध दमन का
पौरों ने पद त्याग निरन्तर !

जलीं पुलिस चौकियाँ, डाकघर,
तार फोन के तार गए कट,
उलटीं झट पटरियाँ रेल की
शासन की नाड़ियाँ गईं फट ! ९२०

आत्मशुद्धि हित अनशन व्रत में
बापू की आस्था थी अविचल,
तप्त स्वर्ण-से निखर अग्नि में
वे भू - जीवन का हरते मल ! ९२४
आगा खाँ के मृत्यु महल में
जन भू मन को करने जागृत
प्रायश्चित किया युग-नर ने
धरा हृदय था हिंसा मूर्छित ! ९२८
आंग्ल भाल बच गया,—कालिमा
चढ़ी न अति पातक की अक्षय,
छूट गए सूली से ईसा,
हरने जन भू का पातक भय ! ९३२
नहीं चाहते थे युगद्रष्टा,
नहीं चाहते थे भारत जन,
साँप छछूंदर के इस रण में
मनुष्यत्व के उर में हो व्रण ! ९३६
निखिल विश्व के पाप नाश हित
आत्मोत्सर्ग बना आवाहन—

पश्चिम के देशों का गौरव
हिंस्र अस्त्र-शस्त्रों का खल रण ! ९४०

प्रतिध्वनित होता जगती में
भारत आत्मा का नैतिक पण,
नयी चेतना शिखा जगाता
आत्म-शक्ति से लोक उन्नयन ! ९४४

प्रकटे थे युग-पुरुष उस समय
निकट आ रहे थे जब भू जन,
वैज्ञानिक अनुसंधानों से
दिशा काल थे रहे न बंधन ! ९४८

शतियाँ दशक, दशक वत्सर बन
घनीभूत होते थे प्रतिक्षण,
स्तंभित था मानव विकास क्रम,
भू पर चलता पशु संघर्षण ! ९५२

जीवन रचना में योजित हो
भूत शक्तियों का अन्वेषण—
आवश्यक था सृजन शांति हित
नव आध्यात्मिक ज्योति जागरण ! ९५६

मन के मूल्यों ही के बल पर
मनुज विकास नहीं संभावित,
भारत भू के हित विशिष्ट चित्—
कर्म जगत् पथ में निर्धारित ! ९६०

भौतिक युग के काम पुरुष को
अंतर्मुख होना आलोकित,

श्रेयस् हित विज्ञान ज्ञान को
बहिरंतर जीवन संयोजित ! ९६४
ऊर्ध्व दृष्टि लेकर आए थे
समदिग् जीवन के उन्नायक,
लक्ष्य सिद्धि हित धर युग कर में
सत्य अहिंसा का धनु सायक ! ९६८
महादेव सँग साध्वी बा की
सात्त्विक बलि कर नर वर अर्पित
जीवन-उन्मुख हुए जगत हित
जीवन - संगिनी से हो वंचित ! ९७२
करुण अहिंसा अंचल पट में
रहा बहुत कुछ गोपन अकथित,
कुत्सित क्रूर दमन की काष्ठा
कभी भविष्य कहेगा निश्चित ! ९७६
मुक्त हुए कारा से बापू,
मुक्त वीर बंदी नेतागण,
सफल हुआ युग-स्वप्न पुरुष का,
भारत ने पाया स्वराज धन ! ९८०
विजय अहिंसा की कहिए या
विश्वयुद्ध से घटित विपर्यय,
चिदादर्श या जड़ यथार्थ का
आग्रह कहिए, युग का निर्णय ! ९८४
द्वन्द्व जगत की मार्ग क्रांतियाँ
मंगलमय विधि से अनुशासित,

अधिमानस का गूढ़ नियम यह,
ध्वस दुरात्मा का ध्रुव निश्चित ! ९८८

जय श्री मिली सुहृद राष्ट्रों को
साम्य वज्र बल से पद मर्दित,
आत्मघात ही सहज सुलभ था
नात्सी खल अधिनायक के हित ! ९९२

हिरोशिमा नागासाकी पर
भीषण अणु बम का विस्फोटन,—
मानवता के मर्मस्थल का
कभी भरेगा क्या दुःसह व्रण ! ९९६

दाँत किटकिटा, ठठा शक्ति मद
भरता अब दिग् दारुण गर्जन,
उपजा यांत्रिक-युग अणु-दानव,—
जड़ भौतिकता के अंतिम क्षण ! १०००

मानव आत्मा की विमुक्ति की
भारत मुक्ति प्रतीक असंशय,
कटे विश्व मन के जड़ बंधन
हुआ चेतना का अरुणोदय ! १००४

भावी भव इतिहास कहेगा
कवि वचनों का आशय गोपन,
निश्चेतन के अंध तमस से
निखर रहा भू जीवन प्रांगण ! १००८

फूट डाल अरि करता शासन,
बढ़े सांप्रदायिक संघर्षण,
मध्य युगों के नरक प्रेत जग
लड़ते गत शतियों का मृत रण !

अंतिम लौह लात वैरी की—
भारत का कर क्रूर विभाजन
ज्यों फिर भावी विश्व-युद्ध हित
रचा हिंसकों ने रण प्रांगण !

भारत - भू उद्वेलित सागर,
कच्छप युग - नायक का दृढ़ पण,
जनगण बल अहि-रज्जु कोटि फण,
मंदर गिरि स्थिर लोक संगठन !

आत्म - शक्ति पशुबल जुट मथते,
नव युग देवासुर संघर्षण,—
जब स्वराज्य लक्ष्मी प्रकटी तब
जन भू मंगल हित था शुभ क्षण !

अगणित लोगों के त्यागों से
हुआ मुक्ति प्रासाद प्रतिष्ठित,
प्राणों की पावन आहुति से
उठा रश्मि - गोलार्ध स्वर्ग स्मित !

धन्य, अहिंसक भारत के रण,
सत्य सिद्ध, जय जन रण नायक,

तुम पशु बल को प्रीति प्रणत कर
मानवता के बने विधायक !

बहिः संगठित पश्चिम जग के
प्राण - स्पर्श से हो युग - जाग्रत्
निज से, अरि से लड़ शत वत्सर,
पराधीन अब रहा न भारत !

उसे मुक्ति - रचना करनी अब
अपने हित, जग जीवन के हित,
युग-युग का भू कल्मष धोकर
पशु को बना मनुज नव संस्कृत !

उतर रहीं ऊषाएँ भू पर
जन मन तम को कर आलोकित,
स्वर्ण रश्मि स्वातन्त्र्य सूर्य जग
जन भू छोर करे दिग् प्लावित !

भारत की अध्यात्म ज्योति में
सृजन शांति हो विश्व संगठित,
अमृत अहिंसा बने अस्त्र नव,
सत्य करे जन - भू पथ दीपित !

भारतीय स्वातन्त्र्य क्रांति का
अमर दाय, जन भू जीवन हित
दिव्य अहिंसा,—जिसे धरा पर
होना जन मंगल हित विकसित !

युग युग का पशु - बल संघर्षण
शुभ्र स्पर्श पा जिसका संस्कृत

सहज हो उठे अंतः शासित,
मानवीय महिमा से मंडित ! १०५६
स्वर्ग खंडवत् भारत भू को
छोड़ा क्यों आंग्लों ने परवश ?
कुटिल काल गति, युग भू स्थिति या
जग का मत, माथे का अपयश ? १०६०
लदे सूर्य साम्राज्यों के दिन,
घटते नित अघटित परिवर्तन,
दीर्घ दृष्टि, कूटज्ञ आंग्ल जन
काल चक्र के प्रति नित चेतन ! १०६४
उल्काओं - से मुकुट टूटते
उलट - पुलट धँसते सिंहासन,
महत् क्रांति का युग अब जग में
दिग् भू व्यापी लोक जागरण ! १०६८
अंध धरा के ओर - छोर सब
दीपित करता नव युग पूषण,
निम्न गर्त भर समतल बनते,
मिलता रज में जीर्ण पुरातन ! १०७२
मंगलमय की मूर्त पीठ भू,
मंगल हो, जन जीवन मंगल,
भारत भू की स्वर्ण मुक्ति हो
जन भू हित आध्यात्मिक संबल ! १०७६
शांति ! शांति-कामी हों भू जन,
रजत शांति छाया में निर्भय

तुम पशु बल को प्रीति प्रणत कर
मानवता के बने विधायक ! १०३२

बहि: संगठित पश्चिम जग के
प्राण - स्पर्श से हो युग - जाग्रत्
निज से, अरि से लड़ शत वत्सर,
पराधीन अब रहा न भारत ! १०३६

उसे मुक्ति - रचना करनी अब
अपने हित, जग जीवन के हित,
युग-युग का भू कल्मष धोकर
पशु को बना मनुज नव संस्कृत ! १०४०

उतर रहीं ऊषाएँ भू पर
जन मन तम को कर आलोकित,
स्वर्ण रश्मि स्वातन्त्र्य सूर्य जग
जन भू छोर करे दिग् प्लावित ! १०४४

भारत की अध्यात्म ज्योति में
सृजन शांति हो विश्व संगठित,
अमृत अहिंसा बने अस्त्र नव,
सत्य करे जन - भू पथ दीपित ! १०४८

भारतीय स्वातन्त्र्य क्रांति का
अमर दाय, जन भू जीवन हित
दिव्य अहिंसा,—जिसे धरा पर
होना जन मंगल हित विकसित ! १०५२

युग युग का पशु - बल संघर्षण
शुभ्र स्पर्श पा जिसका संस्कृत

सहज हो उठे अंतः शासित,
मानवीय महिमा से मंडित ! १०५६
स्वर्ग खंडवत् भारत भू को
छोड़ा क्यों आंग्लों ने परवश ?
कुटिल काल गति, युग भू स्थिति या
जग का मत, माथे का अपयश ? १०६०
लदे सूर्य साम्राज्यों के दिन,
घटते नित अघटित परिवर्तन,
दीर्घ दृष्टि, कूटज्ञ आंग्ल जन
काल चक्र के प्रति नित चेतन ! १०६४
उल्काओं - से मुकुट टूटते
उलट - पुलट धँसते सिंहासन,
महत् क्रांति का युग अब जग में
दिग् भू व्यापी लोक जागरण ! १०६८
अंध धरा के ओर - छोर सब
दीपित करता नव युग पूषण,
निम्न गर्त भर समतल बनते,
मिलता रज में जीर्ण पुरातन ! १०७२
मंगलमय की मूर्त पीठ भू,
मंगल हो, जन जीवन मंगल,
भारत भू की स्वर्ण मुक्ति हो
जन भू हित आध्यात्मिक संबल ! १०७६
शांति ! शांति-कामी हों भू जन,
रजत शांति छाया में निर्भय

तुम पशु बल को प्रीति प्रणत कर
मानवता के बने विधायक !

बहिः संगठित पश्चिम जग के
प्राण - स्पर्श से हो युग - जाग्रत्
निज से, अरि से लड़ शत वत्सर,
पराधीन अब रहा न भारत !

उसे मुक्ति - रचना करनी अब
अपने हित, जग जीवन के हित,
युग-युग का भू कल्मष धोकर
पशु को बना मनुज नव संस्कृत !

उतर रहीं ऊषाएँ भू पर
जन मन तम को कर आलोकित,
स्वर्ण रश्मि स्वातन्त्र्य सूर्य जग
जन भू छोर करे दिग् प्लावित !

भारत की अध्यात्म ज्योति में
सृजन शांति हो विश्व संगठित,
अमृत अहिंसा बने अस्त्र नव,
सत्य करे जन - भू पथ दीपित !

भारतीय स्वातन्त्र्य क्रांति का
अमर दाय, जन भू जीवन हित
दिव्य अहिंसा,—जिसे धरा पर
होना जन मंगल हित विकसित !

युग युग का पशु - बल संघर्षण
शुभ्र स्पर्श पा जिसका संस्कृत

सहज हो उठे अंतः शासित,
मानवीय महिमा से मंडित ! १०५६
स्वर्ग खंडवत् भारत भू को
छोड़ा क्यों आंग्लों ने परवश ?
कुटिल काल गति, युग भू स्थिति या
जग का मत, माथे का अपयश ? १०६०
लदे सूर्य साम्राज्यों के दिन,
घटते नित अघटित परिवर्तन,
दीर्घ दृष्टि, कूटज्ञ आंग्ल जन
काल चक्र के प्रति नित चेतन ! १०६४
उल्काओं - से मुकुट टूटते
उलट - पुलट धँसते सिंहासन,
महत् क्रांति का युग अब जग में
दिग् भू व्यापी लोक जागरण ! १०६८
अंध धरा के ओर - छोर सब
दीपित करता नव युग पूषण,
निम्न गर्त भर समतल बनते,
मिलता रज में जीर्ण पुरातन ! १०७२
मंगलमय की मूर्त पीठ भू,
मंगल हो, जन जीवन मंगल,
भारत भू की स्वर्ण मुक्ति हो
जन भू हित आध्यात्मिक संबल ! १०७६
शांति ! शांति-कामी हों भू जन,
रजत शांति छाया में निर्भय

प्रगति करे रचना प्रिय जन मन,
हृदय - स्वर्ग सर्जन में तन्मय !

मुक्ति पर्व जन मना रहे थे,
जननायक थे लिए मौन व्रत,
वह उपवास करुण प्रतीक था,
रक्त पंक था रंक नवागत !

अंतिम आहुति का क्षण आया,—
सोच रहे थे तब मृत्युंजय,
मर्म रुधिर पीकर ही बर्बर
भू की प्यास बुझेगी निश्चय !

भीष्म ग्रीष्म बीता तप खँट कर
अंध धुंध से मूँद दिगंतर,
वन्य व्याघ्र - से गरजे अंधड़,
सूर्य रश्मि रण - तूर्य प्रखर स्वर !

मुक्ति धुनी कोई तापस वर
त्राटक साध, जटा धर धूसर,
हो प्रचंड पंचाग्नि सेकता,
भस्म रमाए उग्र देह पर !

युग रवि कर से खींच सिन्धु जल
श्याम वर्ण तन खड़ा क्षितिज पर,
नहलाता नभ द्विप अब भू को
बरसा शतमुख सौंधे सीकर !

भारत लक्ष्मी को अभिषेकित
करते हों दिग् गज जलमुच्-कर,
रोमांचित थी शस्य हरित भू
मुग्ध वधू - सी पा स्वराज्य वर !

जन मन आवेशों की विद्युत्
मत्त नाचती हर्ष घोष कर,
नभ झुक - झर मिलता सागर से,
सागर उड़ नभ उर देता भर !

इन्द्रधनुष सुर केतन करता
मुक्त तिरंगे का अभिवादन,
उड़ उड़ सित बक पाँति शान्ति ध्वज
शुभ्र कांति से हरती लोचन !

राष्ट्र मुक्ति रे केवल प्रथम चरण भर
विश्व एकता करनी भू पर निर्मित,
मनुज प्रीति के अमर सूत्र में गुंफित
स्वर्ग पीठ करनी भू-मन पर स्थापित !

वज्रपात अघटित न अनभ्र गगन से,
जीवित रावण कंस अचेतन मन में,
मानव बनना दूर, दीर्घ, दुष्कर पथ
अस्त सूर्य ! लोहित तम भू-प्रांगण में !

शब्दार्थ और प्रसंगार्थ

पंक्ति-निर्देश

कृच्छ्र : कष्टमय, कष्टसाध्य। ५

कौन चल रहा···चरण धर ? : कवि का अभिप्रेत महात्मा गांधी से है जिनकी उदात्त वाणी और ऊर्ध्व चेतना ने भारतीय मानस को उच्च-भूमि दी। ९-१०

ऋषि अगस्त्य : अगस्त्य मुनि एक वैदिक ऋषि हैं। उनके विषय में अनेक कथाएँ प्रचलित हैं जिनमें से दो इस प्रसंग में उल्लेखनीय हैं। उन्होंने दो बार समुद्र को पी लिया था। पहली कथा इस प्रकार है— वृत्रासुर के वध के बाद बच्चे हुए कालेय आदि राक्षस छिपकर समुद्र में रहने लगे थे और रात को बाहर निकलकर ऋषि-मुनियों को खा जाते थे। उनका दुःख दूर करने के लिए उन्होंने एक चुल्लू में समुद्र का जल पी लिया। समुद्र के सूख जाने पर उसमें से दो भयंकर राक्षस आतापी-वातापी निकले। इन दोनों को भी अगस्त्य मुनि ने बड़ी युक्ति से मार डाला।

दूसरी कथा अधिक प्रचलित है जो इस प्रकार है—एक बार समुद्र टिटिहरी नामक एक चिड़िया के बच्चों को बहा ले गया। समुद्र से बदला लेने के लिए वह चिड़िया उसे सुखा देने की इच्छा से अपनी चोंच में पानी भर-भरकर फेंकने लगी। अगस्त्य मुनि ने उसे ऐसा करते देख उसका कारण पूछा और उसे आश्वासन दिया कि वह समुद्र को दण्ड देंगे। ऐसा कहकर वह समुद्र के किनारे स्नान करने लगे; उसी समय समुद्र उनकी पूजा की समस्त सामग्री बहा ले गया, इससे ऋषि का क्रोध और

भी बढ़ गया। उन्होंने तीन बार आचमन करके समुद्र को सुखा दिया। ११

लावण्य-सिन्धु : पराधीन भारत के जीवन-वैषम्यों का प्रतीक। १७

लवण : नमक (मुक्ति-आन्दोलन का प्रतीक)। २०

लवणासुर : निरंकुश ब्रिटिश साम्राज्यशाही का प्रतीक।

अयोध्यापुरी में युवनाश्व के पुत्र मान्धाता राजा हुए हैं। वे बड़े पराक्रमी थे। पृथ्वी को जीतकर जब उन्होंने स्वर्ग पर भी अधिकार करना चाहा तब स्वर्ग के राजा इन्द्र ने कहा—पहले सारी पृथ्वी को तो जीतो, फिर स्वर्गलोक पर आँख उठाना। पृथ्वी पर ही मधुवन (मथुरा) में मधुदैत्य का पुत्र लवणासुर रहता है, वह तुम्हारी आधीनता स्वीकार नहीं करता। मान्धाता ने लवणासुर के पास दूत भेजा, उसने दूत को गालियाँ देकर निकाल दिया। लवण और मान्धाता में भयंकर युद्ध हुआ जिसमें मान्धाता मारे गये। लवणासुर के पिता मधु को शिवजी से एक शूल प्राप्त हुआ था जो शत्रु का वध करने के बाद वापस लौट आता था। मधु यह शूल लवणासुर को सौंपकर स्वयं समुद्र में रहने चला गया था। च्यवन इत्यादि अनेक ऋषियों ने लवणासुर के अत्याचारों से दुःखी हो रामचन्द्र से अपना दुःख कहा। श्रीरामचन्द्र ने मधुपुरी में शत्रुघ्न का राज्याभिषेक कर दिया और उन्हें लवण के साथ युद्ध करने के लिए भेजा। शत्रुघ्न के पास भी एक दिव्य अमोघ अस्त्र था जिससे विष्णु ने मधु और कैटभ दैत्यों को मारा था। यह दिव्य बाण लवण का वध करके वापस आ गया। २१

लवण द्वीप : ग्रेट ब्रिटेन का प्रतीक (जहाँ से भारत के शोषण के लिए काले क़ानून जारी किये जाते थे)। ३७

जड़ भू शिला बनी नव चेतन : गांधी-रूपी राम के स्पर्श से जन-मानस की शिला-जैसी जड़ता नवचेतना में परिवर्तित हो गयी।

राम के चरणों के स्पर्श से गौतम ऋषि की पत्नी अहिल्या

का उद्धार हुआ था, जो अपने पति के शाप के कारण पत्थर बन गयी थी। कथा इस प्रकार है कि एक दिन इन्द्र, चन्द्रमा की सहायता से गौतम को धोखा देकर आश्रम से बाहर ले गया और स्वयं गौतम का वेश धारण करके अहिल्या को धोखा दिया। लौटने पर गौतम ने दोनों को शाप दिया। उसी के फलस्वरूप अहिल्या शिला बन गयी। भगवान राम जब विश्वामित्र के साथ मिथिला जा रहे थे, रास्ते में उन्होंने इसका उद्धार किया। शाप-मुक्त होकर अहिल्या पतिलोक चली गयी। अहिल्या की गणना प्रातःस्मरणीय पंच-कन्याओं में होती है। ये पंच-कन्याएँ हैं—अहिल्या, सीता, द्रौपदी, तारा और मन्दोदरी। ४८

दावा : वन की आग जो वृक्षों की शाखाओं की रगड़ से अपने-आप लग जाती है। ७५

असि : तलवार। ९३

सान : शाण। ९४

कृमि : कीटाणुओं से भरा हुआ। १०१

कर्दम : कीचड़। १०१

केतन : पताका। १०२

किल्विष : दोष, रोग, पाप। १०३

पावक : अग्नि, तेज। १०४

देखा सम्मुख··· गज भारत : त्रिकूट पर्वत पर एक बहुत बड़ा सरोवर था। उसमें एक महाबली ग्राह रहता था। वहाँ अनेक हाथी जल-विहार करने के लिए आते थे। एक बार अचानक ही उस ग्राह ने गजराज का पैर पकड़ लिया। दोनों में काफ़ी देर तक युद्ध होता रहा। अन्त में गजराज हारने लगा। बचने का और कोई उपाय न देखकर वह पूर्व-जन्म के संस्कार से भगवान की स्तुति करने लगा। भक्त की पुकार सुनकर भगवान उसकी रक्षा करने के लिए नंगे पैरों ही दौड़ पड़े। जल्दी से गरुड़ ने जाकर उन्हें अपने कन्धे

पर बैठा लिया। दूर से भगवान को आते देखकर गजराज ने सरोवर से एक फूल तोड़ा और सूंड़ में उठाकर उन्हें अर्पित किया। विष्णु ने गजेन्द्र और ग्राह दोनों का उद्धार किया। वास्तव में ये दोनों ही शापग्रस्त होकर यह जीवन भोग रहे थे। ग्राह पूर्व-जन्म में हू-हू नामक गन्धर्व था। देवल ऋषि के शाप से उसे ग्राह-रूप में जन्म मिला था तथा गजराज पांड्य देश का इन्द्रद्युम्न नाम का राजा था। वह कुलाचल पर्वत पर आश्रम बनाकर भजन करता था। एक दिन वह समाधि में था तभी अगस्त्य ऋषि आ पहुँचे और राजा को चुपचाप बैठे देख उसे अहंकारी समझकर शाप दिया कि तू हाथी हो जा। भगवान की भक्ति के प्रभाव से उसका ज्ञान बना रहा और हाथी होकर भी वह ईश्वर की स्तुति कर सका। १०७-१०८

शुभ्र तिमिर···सिर के बल : सहज-शुभ्र आध्यात्मिक साधना, मध्य-कालीन विकृति और रुग्णता के कारण आज केवल जर्जर और अस्वस्थ रूढ़ियों और परम्पराओं के रूप में ही शेष रह गयी है। उसके कारण आज की भारतीय चेतना धर्म के नाम पर केवल अज्ञान और ज्ञान की संकीर्णताओं में ग्रस्त है।

१०९-११०

प्रज्ञा : बुद्धि, विवेक। १२५

अक्षय : अविनाशी, क्षयरहित। १२८

अन्तरैक्य : अन्तश्चैतन्य अथवा हृदय पर आश्रित ऐक्य। १३७

क्रोड़ : गोद। १४४

कल्प : अति दीर्घकाल का प्रतीक (ब्रह्मा का एक दिन जिसमें एक हजार महायुग माने जाते हैं। एक महायुग में चार अरब बत्तीस करोड़ मानव-वर्ष माने जाते हैं।) १४५

पूषन : सूर्य। १४६

रहः सूर्य : आध्यात्मिक अथवा आत्मिक ज्ञान का आलोक। १५८

भूत-तमस : भौतिकवाद से उत्पन्न तमोगुण, जो अज्ञान, अन्धकार, भ्रम आदि का कारण बनता है। १७३

आनन : मुख, चेहरा। १८०

खर : तीक्ष्ण, तीखा। १९०

अनुशिष्ट : अनुशासित। १९१

चरु : यज्ञ में आहुति देने के लिए पकाया हुआ अन्न। १९३

मख : यज्ञ। १९४

कृष्णायन : कारागार, श्रीकृष्ण का जन्म बन्दीगृह में हुआ था, इसलिए उसे कृष्णायन कहा गया है। २०८

कुलिश : वज्र। २३२

अस्पृश्यता : छुआछूत। २६२

शृंगी : सींग। २७०

दंष्ट्रा : दाँत। २७०

पंक : कीचड़। २७३

प्रक्षालन : धोना। २७४

वातायन : खिड़की, झरोखा। २७८

दर्प : अभिमान, घमण्ड। ३१०

अजा गल-स्तन : निरर्थकता का प्रतीक। बकरी के गले में स्तन के आकार का मांसपिण्ड रहता है, जिसकी कोई उपयोगिता नहीं होती। ३१२

निर्निमेष : एकटक, बिना पलक गिराये हुए। ३१५

दीप्त : चमकता हुआ, आलोकित। ३१८

चैतन्य : ज्ञान, चेतना। ३१८

दिगन्तर : दिशान्तर। ३१८

ह्रास : पतन। ३२१

विपन्न : संकट-ग्रस्त। ३२६

शिरस्त्राण : लोहे का टोप जिसे शस्त्रों से सिर की रक्षा करने के लिए

पहना जाता है। ३३२

अप्रतिहत : अबाधित, अपराजित। ३३४

कल्मष : पाप, मलिनता। ३३६

स्वाति : २७ नक्षत्रों में से पन्द्रहवाँ नक्षत्र। इस नक्षत्र में होने वाली वर्षा का जल पपीहा पीता है। ३४४

चातक : पपीहा। ३४४

बाड़व : समुद्र में अपने-आप लगनेवाली अग्नि। ३४७

स्फुलिंग : चिनगारियाँ, अग्निकण। ३४८

महत् त्याग···जीवन पावन : स्वतन्त्रता-यज्ञ के आरम्भ होते ही, सत्याग्रही, रक्त में स्नान करके गौरवान्वित हो गये। भारतीय जन-मानस त्यागमयी साधना और उत्सर्ग की रुपहली अग्नि से दीप्त हो उठा। उद्दीप्त समष्टि चेतना और लक्ष्य के अभाव में जन-जीवन में जो रुग्णता छायी हुई थी, वह जैसे चेतना की इस अग्नि में तपकर स्वर्ण बन गयी। इस चेतना के आलोक का अंश ग्रहण कर भारतीय मानस दीप्त और पवित्र हो गया। (रजत और स्वर्ण क्रमशः उद्दीप्त और दीप्त चेतना के प्रतीक हैं)। ३६५-६८

उन्मेषित : जाग्रत, दीप्त। ३७०

अभिषेकित : जिसका अभिषेक हुआ हो। ३७२

इति : अन्त। ३८०

अथ : प्रारम्भ। ३८०

वागिच्छा पर संयम : अभिव्यक्ति की इच्छा पर संयम, बोलने की इच्छा पर संयम। ३८७

प्रतीकार : बदला (प्रतिकार)। ३९७

सक्रिय : क्रियाशील, फुर्तीला। ३९८

व्रण : घाव। ४००

अघ : पाप। ४०७

उद्यापन : व्रत की समाप्ति। ४१२

प्रांगण : आँगन। ४१६

निखिल : सम्पूर्ण। ४२४

कुहरों : गर्तों। ४२९

कढ़ : निकलकर। ४२९

भित्ति : दीवार। ४३६

प्रभंजन : आँधी, तूफ़ान। ४५४

आह्वान : पुकार। ४६१

स्फटिक : पारदर्शी। ४६७

गिरि : पर्वत। ४७१

गह्वर : गुफा।

गिरि और गह्वर क्रमशः समाज के उच्च और निम्न वर्ग के प्रतीक हैं। उच्च वर्ग जो अब तक मौन धारण किये घुट रहा था, क्रान्ति की भावना से भर गया तथा दलित, शोषित और भूखा निम्न वर्ग भी आततायी का नाश करने के पागल जोश से भर गया। ४७२

विवरों से : बिलों से (यहाँ घर से तात्पर्य है)। ४७४

मुष्टि : मुट्ठी। ४८२

मृषा : झूठ। ४८३

दुरित : पाप, बुराई। ४८४

संघर्षण : होड़, स्पर्धा। ४९०

दैदीप्य : दीप्त, आलोकित। ४९४

मंडित : शोभित। ५०२

भास्वर : दीप्तिमान। ५०२

शुभ्र : उज्ज्वल, **दैदीप्यमान**। ५०३

विग्रह : शरीर, मूर्ति। ५०३

आस्य : चेहरा, मुख। ५०७

पहना जाता है। ३३२

अप्रतिहत : अबाधित, अपराजित। ३३४

कल्मष : पाप, मलिनता। ३३६

स्वाति : २७ नक्षत्रों में से पन्द्रहवाँ नक्षत्र। इस नक्षत्र में होने वाली वर्षा का जल पपीहा पीता है। ३४४

चातक : पपीहा। ३४४

बाड़व : समुद्र में अपने-आप लगनेवाली अग्नि। ३४७

स्फुलिंग : चिनगारियाँ, अग्निकण। ३४८

महत् त्याग···जीवन पावन : स्वतन्त्रता-यज्ञ के आरम्भ होते ही, सत्याग्रही, रक्त में स्नान करके गौरवान्वित हो गये। भारतीय जन-मानस त्यागमयी साधना और उत्सर्ग की रुपहली अग्नि से दीप्त हो उठा। उर्दात्त समष्टि चेतना और लक्ष्य के अभाव में जन-जीवन में जो रुग्णता छायी हुई थी, वह जैसे चेतना की इस अग्नि में तपकर स्वर्ण बन गयी। इस चेतना के आलोक का अंश ग्रहण कर भारतीय मानस दीप्त और पवित्र हो गया। (रजत और स्वर्ण क्रमशः उद्दीप्त और दीप्त चेतना के प्रतीक हैं)। ३६५-६८

उन्मेषित : जाग्रत, दीप्त। ३७०

अभिषेकित : जिसका अभिषेक हुआ हो। ३७२

इति : अन्त। ३८०

अथ : प्रारम्भ। ३८०

वागिच्छा पर संयम : अभिव्यक्ति की इच्छा पर संयम, बोलने की इच्छा पर संयम। ३८७

प्रतीकार : बदला (प्रतिकार)। ३९७

सक्रिय : क्रियाशील, फुर्तीला। ३९८

व्रण : घाव। ४००

अघ : पाप। ४०७

उद्यापन : व्रत की समाप्ति। ४१२
प्रांगण : आँगन। ४१६
निखिल : सम्पूर्ण। ४२४
कुहरों : गर्तों। ४२६
कढ़ : निकलकर। ४२६
भित्ति : दीवार। ४३६
प्रभंजन : आँधी, तूफ़ान। ४५४
आह्वान : पुकार। ४६१
स्फटिक : पारदर्शी। ४६७
गिरि : पर्वत। ४७१
गह्वर : गुफा।

गिरि और गह्वर क्रमशः समाज के उच्च और निम्न वर्ग के प्रतीक हैं। उच्च वर्ग जो अब तक मौन धारण किये घुट रहा था, क्रान्ति की भावना से भर गया तथा दलित, शोषित और भूखा निम्न वर्ग भी आततायी का नाश करने के पागल जोश से भर गया। ४७२

विवरों से : बिलों से (यहाँ घर से तात्पर्य है)। ४७४
मुष्टि : मुट्ठी। ४८२
मृषा : झूठ। ४८३
दुरित : पाप, बुराई। ४८४
संघर्षण : होड़, स्पर्धा। ४९०
दैदीप्य : दीप्त, आलोकित। ४९४
मंडित : शोभित। ५०२
भास्वर : दीप्तिमान। ५०२
शुभ्र : उज्ज्वल, दैदीप्यमान। ५०३
विग्रह : शरीर, मूर्ति। ५०३
आस्य : चेहरा, मुख। ५०७

आसमुद्र पृथ्वी···गो को दुहकर : यहाँ कवि ने एक पौराणिक आख्यान को बिलकुल नये सन्दर्भ में रखकर और नया अर्थ देकर प्रयुक्त किया है। परम्परागत आख्यान इस प्रकार है—राजा वेन बहुत दुष्ट था। उसने अपने को ही ईश्वर घोषित करके वेद-पुराणों की रीति, यज्ञ, जप-तप, व्रत सबकी मनाही कर दी थी, ऋषियों ने प्रजा के कल्याण के लिए उसे मृत्यु का शाप दिया। उसका पुत्र था पृथु। जब वह सिंहासन पर बैठा तो पृथ्वी अन्नहीन हो गयी थी। प्रजा क्षुधा से पीड़ित थी। यह जानकर कि पृथ्वी ने अन्न और औषधियों को जान-बूझकर छिपा दिया है, राजा बहुत क्रुद्ध हुए और उसे लक्ष्य कर बाण चलाने के लिए धनुष उठाया। पृथ्वी भय से काँपकर गौ का रूप धारण कर भागने लगी पर अन्त में हारकर उसके चरणों पर गिर गयी। पृथु ने देवता, ऋषि, राक्षस, नाग, यक्ष, पक्षी, कीट-पतंग सबको उस गौ का दूध दुह लेने की आज्ञा दे दी। उसके बाद अपने धनुष की नोंक से पर्वतों को तोड़-फोड़कर सारी पृथ्वी को समतल कर दिया। फिर सर्व-काम दुहा पृथ्वी को अपनी कन्या के रूप में स्वीकार किया। इसी कारण धरती का नाम पृथ्वी हुआ। ५११-१२

मनस्ताप : मानसिक ग्लानि। ५१५

पाहन : पत्थर। ५१६

नृशंस : क्रूर। ५३०

सुरधनु : इन्द्रधनुष। ५३४

अभ्यागत : अतिथि। ५४०

वातचक्र : बवण्डर। ५५१

सम्भ्रान्त : प्रतिष्ठित। ५५३

प्राचीर : दीवार। ५५५

तुमुल : भीषण, घोर। ५५८

गतिरोध : बाधा। ५६५

रज-प्रकृति : प्रकृति का वह गुण जिससे जीवधारियों में भोग-विलास तथा प्रदर्शन-वृत्ति की ओर रुचि रहती है। ५६६

निष्प्रभ : तेजहीन। ५६०

प्रमाद : भ्रम, अन्तःकरण की दुर्बलता। ५६३

तिमिर : अन्धकार। ५६५

बहि-शुद्धि : बाह्य आचार-व्यवहार की शुद्धि। ६०३

अन्तः-शुद्धि : आत्म-परिष्करण, मानसिक शुद्धि। ६०४

जल्पित : प्रलाप, डींग के रूप में कहा गया। ६०४

दशक : दस वर्षों का काल। ६०५

अज : बकरी। ६०७

शस्य : अन्न। ६२२

प्ररोह : अंकुर। ६३१

स्पृहा : कामना। ६३२

कुण्डल : सर्प के शरीर का गोलाकार मण्डल अथवा घुमाव। ६३६

क्षीरोदधि : क्षीर-सागर। ६४१

स्तव : गुणगान, स्तुति। ६४४

दिगम्बर : शिव। ६६२

महिमान्वित : महिमायुक्त। ६६४

ठठरी : हड्डियों का ढाँचा। ६६५

पुंजित : एकत्र। ६६६

झंझा : आँधी। ६७३

तिक्तता : कड़वाहट। ६८६

सित : सफ़ेद, अकलुष। ६८८

रीते : खाली। ६९०

आरोहण : ऊपर चढ़ना, उच्च स्तर पर जाना। ६९६

क्षुधार्त : क्षुधा से पीड़ित। ७१०

निहत्थे : निःशस्त्र। ७१३

नद्ध : बद्ध, बँधा हुआ। ७१६
धूमकेतु : केतुग्रह, पुच्छल तारा। ७३१
लोहा लेती : वीरता से सामना करती। ७३७-३८
नशक फूटकर लगा निकलने : सत्य स्थिति का अनुभव होने लगा। ७४१
परिभव : अनादर, पराजय। ७४६
अवचेतन : अन्त:संज्ञा, अर्द्ध-चेतना। ७४७
धुरी-राष्ट्र : द्वितीय विश्वयुद्ध में एक ओर तीन धुरी-राष्ट्र (Axis Powers) थे और दूसरी ओर मित्र-राष्ट्र थे। प्रथम के अन्तर्गत थे जर्मनी, इटली और जापान। मित्र-राष्ट्रों में पहले ग्रेट ब्रिटेन और अमेरिका थे, बाद में रूस भी सम्मिलित हो गया था। ७४८
सुज्ञ : ज्ञानी, विवेकी। ७४६
पुरस्सर : अग्रगामी, अग्रणी, युक्त। ७५५
उपक्रम : आरम्भ। ७७७
स्थित-धी : स्थिर बुद्धि, विवेकशील। ७८५
नय : नीति। ७६८
गर्हित : निन्दित, दूषित। ८०७
प्रतिवर्तन : लौटना, वापस आना। ८२४
वाक्-स्वातन्त्र्य : वाणी की स्वतन्त्रता, अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता। ८२५
पण : सिक्का, मूल्य। ८३०
प्रत्ययन : विश्वास दिलाना। ८३४
प्रबोधन : समझाना। ८३४
मन्यु : क्रोध, अहंकार, उत्साह, शिव। ८३७
उद्घोष : गर्जन, घोषणा। ८४७
पण : (यहाँ) बाज़ी, मूल्य। ८४८
प्रभु के चर : सत्ताधारी शासन के कर्मचारी, पुलिस, सैनिक। ८७६
जव : वेग। ८८५

घानी पेल : कोल्हू में तेलहन डालकर तेल निकालने के लिए उसे पेलना। ८६७

ऊर्ध्वतर : उच्चतर। ९०४

फड़ : दूकान का वह स्थान जहाँ बैठकर दूकानदार माल बेचता है। ९१३

उन्नयन : उच्च भावभूमि पर ले जाना अथवा मोड़ना। ९४४

वत्सर : वर्ष। ९४९

भूत शक्तियों : भौतिक शक्तियों। ९५४

ऊर्ध्व : उच्च। ९६५

समदिग् : चारों दिशाओं में समानरूप से व्याप्त। ९६६

अकथित : बिना कहा हुआ। ९७४

युद्ध से घटित विपर्यय : युद्ध के ध्वंसात्मक परिणाम, युद्ध से उत्पन्न अप्रत्याशित परिस्थितियाँ। ९८२

चिदादर्श : चेतनामूलक अथवा ज्ञानमूलक आदर्श। ९८३

अधिमानस : उच्चतर मानस। ९८७

ध्रुव : अटल। ९८८

सुहृद राष्ट्रों : मित्र-राष्ट्रों। ९८९

गोपन : छिपा हुआ। १००६

निश्चेतन : ज्ञानहीन, चेतनाहीन। १००७

तमस : तमोगुण। १००७

भारत-भू···था शुभ क्षण : एक बार दैत्यराज बलि ने इन्द्र की अमरावती पर आक्रमण करके इन्द्र का राज्य छीन लिया। दैत्यों के भय से ऐरावत हाथी, उच्चैःश्रवा अश्व तथा लक्ष्मी आदि समुद्र में कूद पड़े। इन्द्र दुःखी होकर भगवान विष्णु के पास गया। उन्होंने इन्द्र को दैत्यों से सन्धि करके समुद्र-मन्थन करने और रत्नों का उद्धार करने की आज्ञा दी। भगवान विष्णु ने मन्दराचल पर्वत को उखाड़कर गरुड़ की पीठ पर रखकर मथानी बनायी; वासुकि नाग को रस्सी का काम करने की आज्ञा

दी। मन्थन के पूर्व ही मन्दराचल डूबने लगा तो विष्णु की एक शक्ति ने विराट कच्छप का रूप धारण कर अपनी कठोर पीठ पर मन्दराचल को धारण कर लिया। मन्थन की रगड़ से समुद्र में चारों ओर अग्नि उत्पन्न हो गयी जिसे बड़वानल कहते हैं। समुद्र में से सबसे पहले कालकूट विष निकला जिसके ताप से सब देवता और राक्षस जलने लगे। उनकी रक्षा करने के लिए उसे शिवजी ने पी लिया, जिससे वे नीलकण्ठ कहलाए। उसके बाद चन्द्रमा, कामधेनु गौ, कल्पवृक्ष, रम्भा, शंख, धनुष, कौस्तुभ रत्न, वारुणी, उच्चैःश्रवा अश्व, ऐरावत हाथी निकले। उसके उपरान्त महालक्ष्मी आविर्भूत हुईं जो विष्णु की आदि-शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित हुईं। और अन्त में अनेक जड़ी-बूटियों और मादक द्रव्यों के साथ धन्वन्तरि वैद्य प्रकट हुए जिनके हाथ में अमृत का पात्र था। १०१७-२४

सूर्य साम्राज्यों के : अंग्रेज़ी साम्राज्य के जो इतना विस्तृत था कि उसमें सूर्य कभी नहीं डूबता था। १०६१

मृत्युंजय : मृत्यु पर विजयी। १०८६

त्राटक : हठयोग में किसी बिन्दु पर दृष्टि एकाग्र करने की क्रिया। १०९४

पञ्चाग्नि : शरीर में जलती हुई पाँच अग्नियाँ—अन्वाहार पचन, गार्हपत्य, आहवनीय, सभ्य और आवसत्थ। १०९५

उपनिषद् के अनुसार स्वर्ग, पर्जन्य, पृथ्वी, पुरुष और योषित।

द्विप : हाथी। १०९९

सीकर : जलकण। ११००

जलमुच् : बादल। ११०२

अनभ्र : बादलों से रहित। १११७

Library IIAS, Shimla
H 811.6 P 195 M
00046395